NEHRU BAL PUSTAKALAYA
महके सारी गली गली
(बाल-कविताएं)
संपादन
निरंकार देव सेवक
कृष्ण कुमार
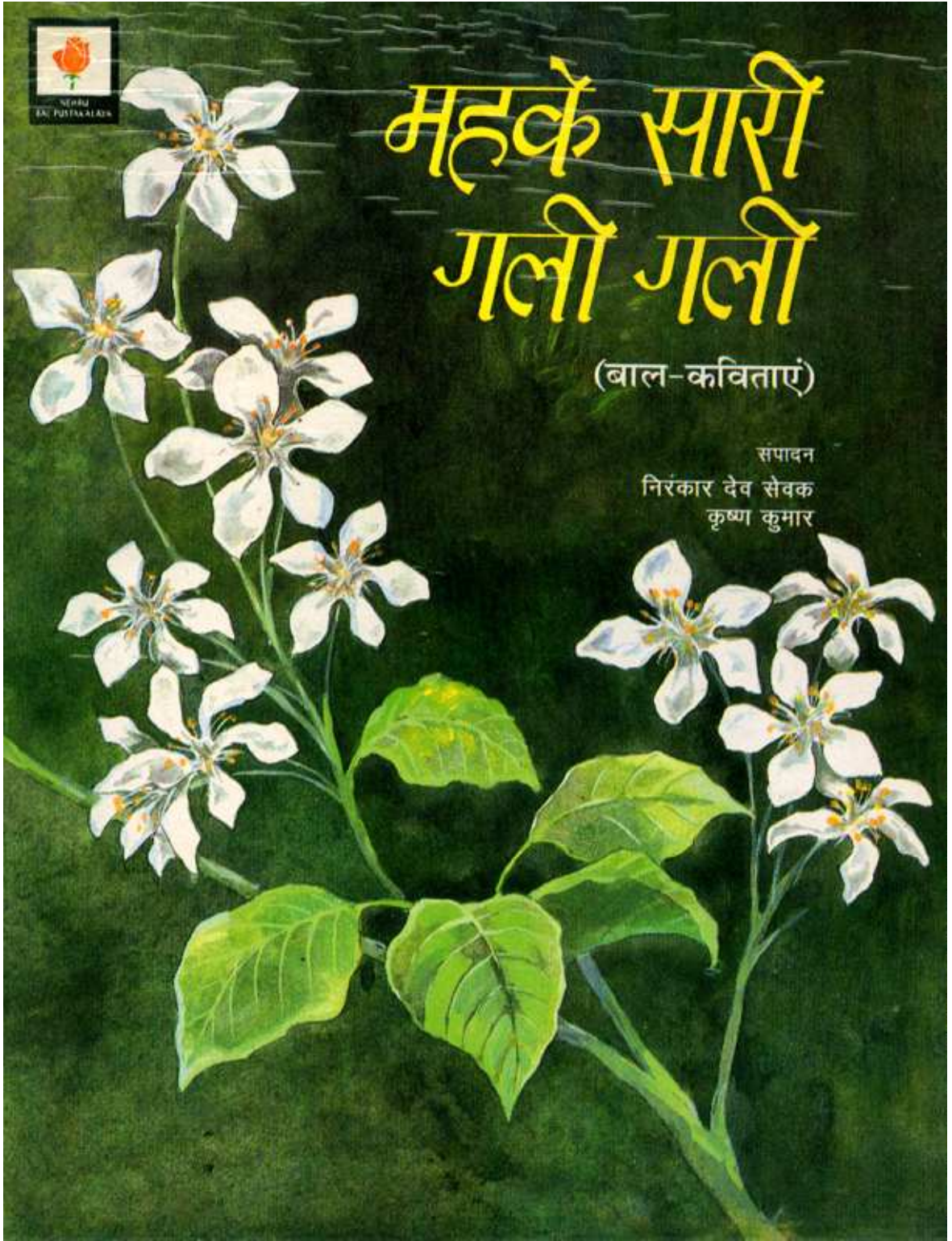
नेहरू बाल पुस्तकालय

महके सारी गली गली

(बीसवीं सदी की श्रेष्ठ हिंदी बाल-कविताओं का संकलन)

संपादन
निरंकार देव सेवक
कृष्ण कुमार

चित्रांकन
जगदीश जोशी

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

भूमिका
(माता-पिता, शिक्षकों एवं समीक्षकों के लिए)

इन कविताओं को ढूंढ़ निकालने और संकलित करने के पीछे हम दोनों के मन में मुख्य उद्देश्य यह था कि हिंदी की एक विशिष्ट साहित्य-धारा भुला न दी जाए। यह खतरा एक अर्से से बढ़ता जा रहा है। एक तो अंग्रेजी का प्रचार-प्रसार मध्यमवर्गीय समाज में निरंतर बढ़ते चले जाने से बच्चों के ललित साहित्य का प्रकाशन ऐसी मजबूती प्राप्त नहीं कर सका है कि वह हिंदी बाल-साहित्य की धरोहर के संरक्षण के प्रति चिंतित हो सके। निरंतर नई रचनाओं का प्रकाशन अवश्य हो रहा है, पर हिंदी बाल-साहित्य की परंपरा जैसी कोई चीज उभरकर नहीं आ पा रही। हमारा मानना है कि इस परंपरा से बहुत कुछ सीखा जा सकता है। आज बच्चों के लिए लिखी जा रही कविताओं में नैतिक उपदेश देने की प्रवृत्ति तो खूब दिखाई देती है, पर बच्चों की सामान्य जिंदगी का स्पंदन मुश्किल से ही कहीं देखने को मिल पाता है। ऐसा स्पंदन हमें इस सदी के तीसरे और चौथे दशक में लिखी गई कविताओं में प्रचुर मात्रा में दिखा। उस दौर के रचनाकारों की विरासत आज जैसे किसी को याद ही नहीं रही है। बाल-साहित्य के क्षेत्र में गंभीर आलोचना के अभाव ने इस विरासत के याद रखे जाने की संभावना को और कमजोर बना दिया है। कुल मिलाकर स्थिति यह है कि ऐसे लोग गिने-चुने रह गये हैं जिन्हें आजादी के आंदोलन के दौरान प्रकाशित बाल-साहित्य की जानकारी हो। बाल-साहित्य से जुड़े हुए पेशेवर लोगों में से अनेक ऐसा मानते हैं कि हिंदी में बच्चों के साहित्य का विकास मुख्यतया स्वतंत्रता के बाद आरंभ हुआ।

हमें आशा है कि यह संकलन एक हद तक इस भ्रम का निवारण कर सकेगा। श्रीधर पाठक और हरिऔध जैसे ख्यात कवियों को छोड़ दें तो भी बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में खासकर बच्चों के लिए लिखने वाले कवियों की अच्छी खासी संख्या बच रहती है। इन रचनाकारों की उपलब्धि आज के बच्चों तक कैसे पहुंचे—जब पारखी विशेषज्ञ भी उनके नामों से परिचित नहीं हैं ? जिन पत्र-पत्रिकाओं में इन कवियों की रचनाएं छपीं, उनके अंक प्राप्त करना बहुत ही कठिन हो गया है। हमें आशंका है कि इनमें से कुछ पत्रिकाएं आगामी एक-डेढ़ दशक में पूर्णतया विलुप्त हो जाएंगी। उस दुखद स्थिति में भाषा का वह लालित्य और बच्चे की दृष्टि की वह पकड़ जो उस दौर के रचनाकारों ने हासिल की थी, सदा के लिए अनुपलब्ध हो जाएगी। इस आशंका का एक कारण, शिक्षा के काम में इस्तेमाल की जाने वाली हिंदी भाषा में लाए जा रहे परिवर्तन हैं। पिछली आधी सदी से जारी इन परिवर्तनों को लाने के उपक्रम ने शैक्षिक उपयोग की हिंदी को आम जिंदगी की धड़कन से बहुत कुछ काट दिया है। इस कारण संभव है कि हिंदी के कई शिक्षक इन कविताओं में से अनेक में प्रयुक्त बोलचाल की भाषा या ग्रामीण हिंदी को 'अशुद्ध' पाएं।

ये शिक्षक बंधु व बहनें यदि इन कविताओं को बच्चों के बीच पढ़कर सुनाएं तो वे पाएंगे कि हिंदी की यह धरोहर आज भी बच्चों को सहज आनंद देने में पूर्णतया समर्थ है। इस धरोहर की रक्षा होनी ही चाहिए। इस दिशा में यह एक छोटा-सा, विनम्र प्रयास है।

दरअसल ये कविताएं इस सदी के हिंदी क्षेत्र के बचपन का दस्तावेज हैं। आजादी के बाद के जो रचनाकार लालित्य और बच्चे के प्रति संवेदनशीलता की कसौटियों पर हमें खरे उतरते नजर आए, हमने उनकी पर्याप्त रचनाओं को इस संकलन में शामिल करने का प्रयास किया है। हम उन सभी कवियों के आभारी हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं के पुनर्प्रकाशन की अनुमति हमें दी है। यह संकलन यदि आज बड़े हो रहे हिंदी भाषी बच्चों के जीवन को सरस बनाने में थोड़ा-भी सफल हुआ तो हम अपने प्रयास की सार्थकता के प्रति आश्वस्त महसूस करेंगे। हमें यह आशा भी है कि यह संकलन बच्चों की शिक्षा को बचपन की प्रकृति के करीब लाने का मार्ग प्रशस्त करेगा। इस संकलन में 'पानी और धूप' शीर्षक से सुभद्रा कुमारी चौहान की एक कविता है जिसमें कहीं-कहीं 'पुलिस' और 'जेल' के आतंक की चर्चा है। जाहिर है कि ये दोनों शब्द ब्रिटिश शासन के संदर्भ में हैं।

-निरंकार देव सेवक

-कृष्ण कुमार

अनुक्रम

मज़े की नाव

कल कल कल, चलती है नैया
फर फर पाल उड़ाती है।
लहरें जो आती हैं आगे
उनको फाड़ हटाती है।।

देखो ठीक ठाक सब रखना
माझी तुम रहना हुशियार।
आज दोपहरे नाव हमारी
ढाके से होवेगी पार।

सागर से सीधे निकलेंगे
तीनों लिये तीन घड़ियाल।
दिन ढलते मदराज देख के
पहुंच जायेंगे कोटिसियाल।

ओहो ओहो कैसी जल्दी
नाव हमारी जाती है।
अभी बात करते में कासी
गया आदि हो आती है।

—रसिकलाल दत्त

अन्धेर

जमींदार के लड़के होते
डिप्टी और कलक्टर होते।
सेठ और लाला के लड़के,
हल्के में इंस्पेक्टर होते।

पर गरीब के घर के बेटे
चौकीदार और चपरासी,
बहुत बढ़ें—हरकारे हों, या
प्लेटफार्म के बनें खलासी।

पढ़ने में सबसे अच्छा था
मंगू भिखमंगे का लड़का,
मैला-मैला लम्बा-लम्बा
जग जाता था होते तड़का।

भीख न मांगी, घर से भागा
अरे ! न जाने क्या-क्या होता।
यह देखो अन्धेर कि मंगू,
पड़ा रह गया बोझा ढोता।।

—विशाल त्रिपाठी

पानी और धूप

अभी अभी थी धूप, बरसने
लगा कहां से यह पानी
किसने फोड़ घड़े बादल के
की है इतनी शैतानी।
सूरज ने क्यों बंद कर लिया
अपने घर का दरवाजा
उसकी मां ने भी क्या उसको
बुला लिया कहकर आजा।
जोर जोर से गरज रहे हैं
बादल हैं किसके काका
किसको डांट रहे हैं किसने
कहना नहीं सुना मां का।
बिजली के आंगन में अम्मां
चलती है कितनी तलवार
कैसी चमक रही है फिर भी
क्यों खाली जाते हैं वार।
क्या अब तक तलवार चलाना
मां वे सीख नहीं पाये
इसीलिए क्या आज सीखने
आसमान पर हैं आये।

एक बार भी मां यदि मुझको
बिजली के घर जाने दो
उसके बच्चों को तलवार
चलाना सिखला आने दो।
खुश होकर तब बिजली देगी
मुझे चमकती सी तलवार
तब मां कोई कर न सकेगा
अपने ऊपर अत्याचार।
पुलिसमैन अपने काका को
फिर न पकड़ने आयेंगे
देखेंगे तलवार दूर से ही
वे सब डर जायेंगे।
अगर चाहती हो मां काका
जायें अब न जेलखाना
तो फिर बिजली के घर मुझको
तुम जल्दी से पहुंचाना।
काका जेल न जायेंगे अब
तुझे मंगा दूंगी तलवार
पर बिजली के घर जाने का
अब मत करना कभी विचार।

—सुभद्रा कुमारी चौहान

मेला

घर के पास लगा था मेला,
उसमें आया चाट का ठेला।
हमने जाकर खायी चाट,
ऐसे थे मेले के ठाट।

घर के पास लगा था मेला,
उसमें आया झूले वाला।
हमने जाकर खाये झूले,
मन में नहीं समाये फूले।

घर के पास लगा था मेला,
उसमें एक खिलौने वाला।
लाये जाकर चार खिलौने,
रंग बिरंगे बड़े सलोने।

घर के पास लगा था मेला,
हमने देखा मन भर मेला।

गुड़िया गुनगुन दोनों साथ,
छोटा ने पकड़ा था हाथ।

मेले के थे ऐसे ठाट।
झूले, ठेले, सुंदर हाट।

—रमेश थानवी

तिल्लीसिं

पहने धोती कुरता झिल्ली,
गमछे से लटकाये किल्ली,
कसकर अपनी घोड़ी लिल्ली,
तिल्लीसिं जा पहुंचे दिल्ली ।।
पहले मिले शेखजी चिल्ली।
उनकी बहुत उड़ाई खिल्ली ।।
चिल्ली ने पाली थी बिल्ली।
तिल्लीसिं ने पाली पिल्ली ।।
पिल्ली थी दुमकटी चिबिल्ली।
उसने धर दबोच दी बिल्ली ।।
मरी देखकर अपनी बिल्ली,
गुस्से से झुंझलाया चिल्ली ।।
लेकर लाठी एक गठिल्ली,
उसे मारने दौड़ा चिल्ली ।।
लाठी देख डर गया तिल्ली।
तुरंत हो गई धोती ढिल्ली ।।
कसकर झटपट घोड़ी लिल्ली,
तिल्लीसिं ने छोड़ी दिल्ली ।।
हल्ला हुआ गली दर गल्ली,
तिल्लीसिं ने जीती दिल्ली ।।

—रामनरेश त्रिपाठी

इल्ली-उल्ला

खा के रसगुल्ला
हमने किया कुल्ला
पानी में उठा बुल्ला
देख रहे मुल्ला
इल्ली-उल्ला।

—सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

चूहा

वह देखो वह आता चूहा,
आँखों को चमकाता चूहा।
मूंछों में मुस्काता चूहा,
लम्बी पूँछ हिलाता चूहा।
मक्खन रोटी खाता चूहा,
बिल्ली से डर जाता चूहा।

—निरंकार देव सेवक

जामुन

पौधा तो जामुन का ही था
लेकिन आये आम।
पर जब खाया तो यह पाया
ये तो हैं बादाम।

जब उनको बोया जमीन में
पैदा हुए अनार।
पकने पर हो गये संतरे
मैंने खाये चार।

—श्रीप्रसाद

कितनी बड़ी दीखती होंगी

कितनी बड़ी दीखती होंगी मक्खी को चीजें छोटी
सागर सा प्याला भर जल, पर्वत-सी एक कौर रोटी।

खिला फूल गुलदस्ते जैसा कांटा भारी भाला-सा
तालों का सूराख उसे होगा बैरगिया नाला-सा !

हरे भरे मैदान की तरह होगा इक पीपल का पात
पेड़ों के समूह-सा होगा बचा खुचा थाली का भात।

ओस बूंद दरपन-सी होगी सरसों होगी बेल समान
सांस मनुज की आंधी-सी करती होगी उसको हैरान।

—ठाकुर श्रीनाथ सिंह

ना धिन धिन्ना

ना धिन धिन्ना
पढ़ते हैं मुन्ना
ता ता थैया
आ जा भैया
ता थई ता थई
ना भई ना भई
धिरकिट धा तू
सिर मत खा तू
धीं तृक धीना
झटपट रीना
धा-धा-धा-धा
अब क्या होगा
धिरकिट धिरकिट
गिरगिट ! गिरकिट !
धा धीना धीना धीना
वो देखो दीनू बीना
धा धीना नाती नक
भैया गया है थक
धिन-धिन्ना धा धिनक
इमली गई है पक
ना तिन्ना तिरकिट तान

कहना तू मेरा मान
धिरकिट धिरकिट धिन धा
जाऊंगा मैं वहां
तिरकिट तिरकिट तिन ता
चल जा तू झटपट आ

ना तिन तिन्ना ना धिन धिन्ना
बस्ता पटक कर दौड़े मुन्ना

धागे-तिरकिट तूना-कत्ता थीं तृक धीना
भागे सरपट दीनू टिल्लू रीना मीना !

—रमेशचंद्र शाह

चतुर चित्रकार

चित्रकार सुनसान जगह में, बना रहा था चित्र।
इतने ही में वहां आ गया, यम राजा का मित्र।।

उसे देखकर चित्रकार के, तुरत उड़ गये होश।
नदी, पहाड़, पेड़, पत्तों का, रह न गया कुछ जोश।।

फिर उसको कुछ हिम्मत आई, देख उसे चुपचाप।
बोला—सुन्दर चित्र बना दूं, बैठ जाइये आप।।

उकरू-मुकरू बैठ गया वह, सारे अंग बटोर।
बड़े ध्यान से लगा देखने, चित्रकार की ओर।।
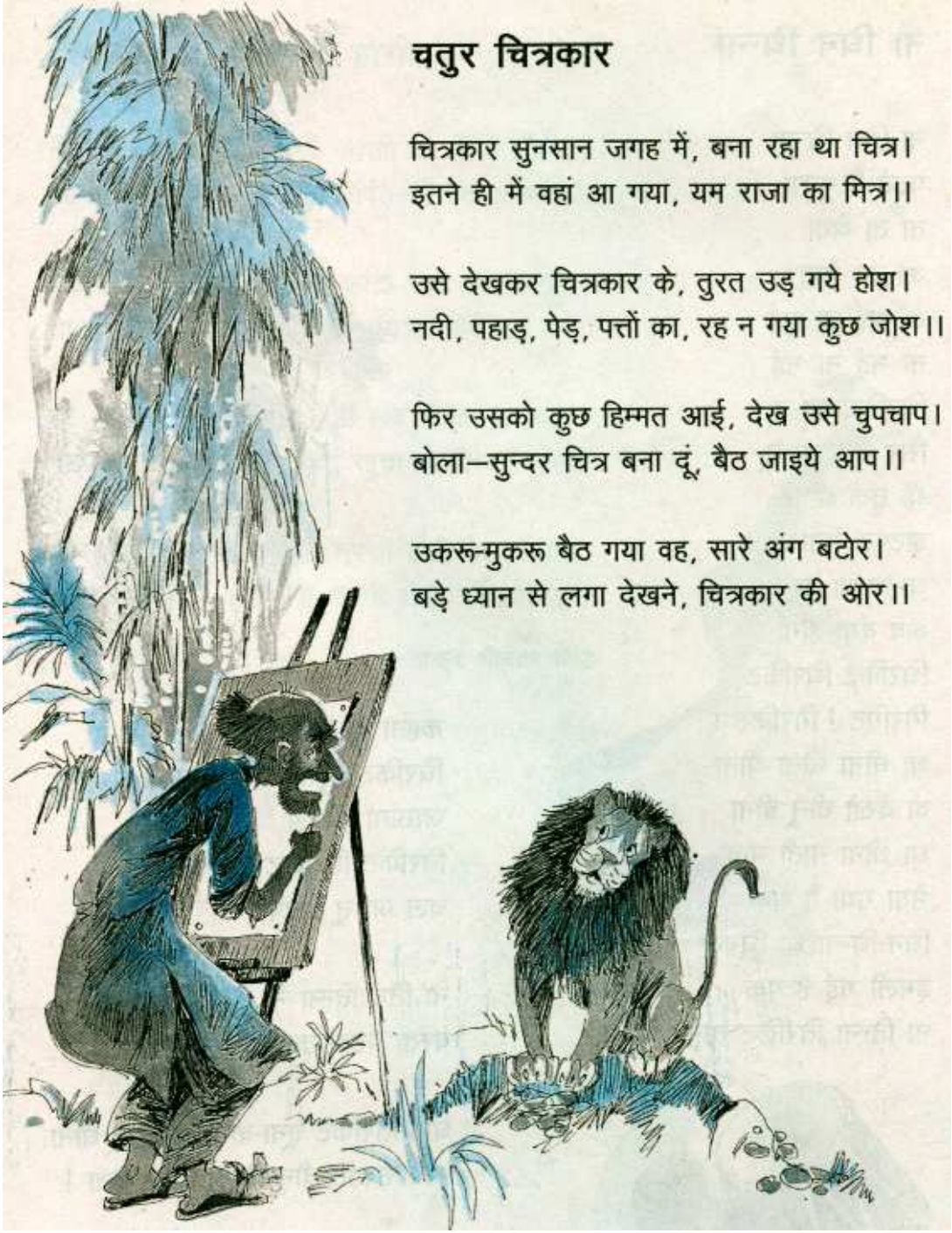
चित्रकार ने कहा—हो गया, आगे का तैयार।
अब मुंह आप उधर तो करिये, जंगल के सरदार।।

बैठ गया वह पीठ फिराकर, चित्रकार की ओर।
चित्रकार चुपके से खिसका, जैसे कोई चोर।।

बहुत देर तक आंख मूंदकर, पीठ घुमाकर शेर।
बैठे-बैठे लगा सोचने, इधर हुई क्यों देर।।

झील किनारे नाव लगी थी, एक रखा था बांस।
चित्रकार ने नाव पकड़कर, ली जी भरके सांस।।

जल्दी-जल्दी नाव चलाकर, निकल गया वह दूर।
इधर शेर था धोखा खाकर, झुंझलाहट में चूर।।

शेर बहुत खिसियाकर बोला, नाव जरा ले रोक।
कलम और कागज तो ले जा, रे कायर डरपोक!!

चित्रकार ने कहा तुरत ही, रखिये अपने पास।
चित्रकला का आप कीजिये, जंगल में अभ्यास।।

—रामनरेश त्रिपाठी
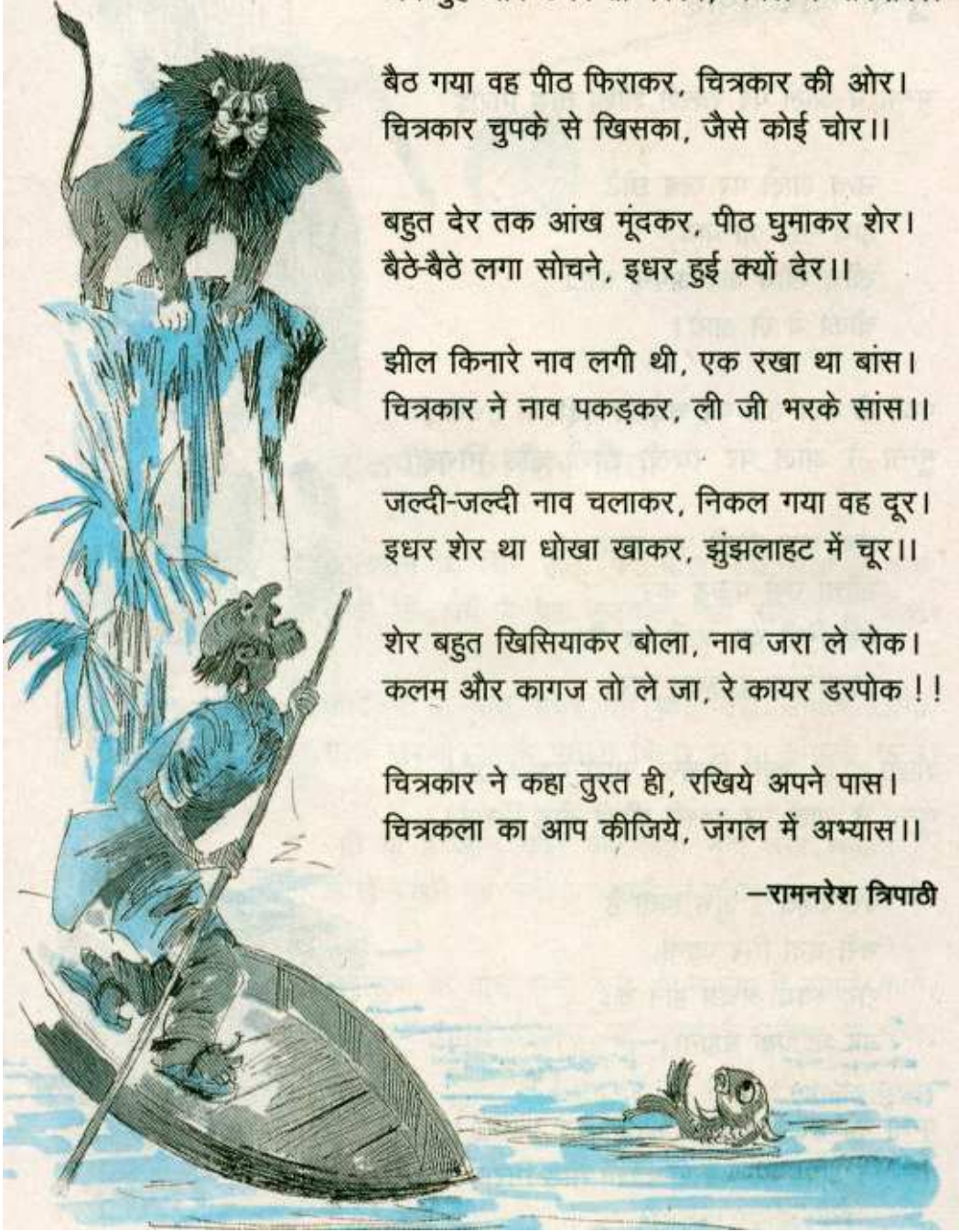
मुन्ना और दवाई

मुन्ना ने आले पर रक्खी शीशी तोड़ गिराई

ऊंचे आले पर जब छोटे
हाथ नहीं जा पाये,
खींच खींच कर अपनी छोटी
चौकी ये ले आये।

पंजों के बल उस पर चढ़कर एड़ी भी उचकाई।
मुन्ना ने आले पर रक्खी शीशी तोड़ गिराई।

हाथ पड़ा शीशी पर आधा
खींचा उसे पकड़ कर,
वहीं गिरी वह आले पर से
इधर-उधर खड़बड़ कर।

शीशी तोड़ी, कांच बिखेरा, सारी दवा बहाई।
मुन्ना ने आले पर रक्खी शीशी तोड़ गिराई।

पर कहते हैं शुभ होता है
भरी दवा गिर जाना,
रोग स्वयं अच्छा होने का
यह भी एक बहाना।

मुन्ना की हर शैतानी में होती कुछ अच्छाई।
मुन्ना ने आले पर रक्खी शीशी तोड़ गिराई।

—निरंकार देव सेवक

आलपीन के सिर होता

आलपीन के सिर होता पर बाल नहीं होता है एक,
कुर्सी के टांगें हैं पर फुटबाल नहीं सकती है फेंक।

कंघी के हैं दांत मगर वह चबा नहीं सकती खाना,
गला सुराही का है पतला किन्तु न गा सकती गाना।

जूते के है जीभ मगर वह स्वाद नहीं चख सकता है,
आँखें रखते हुए नारियल कभी न कुछ लख सकता है।

है मनुष्य के पास सभी कुछ ले सकता है सबसे काम,
इसीलिये सबसे बढ़कर वह पाता है दुनिया में नाम।

—रमापति शुक्ल

हम भी होते काश कबूतर

हम भी होते काश कबूतर
मजे उड़ाते दिन भर उड़कर।
बच्चे हमें चुगाते दाने
गाते मीठे-मीठे गाने।
खूब गुटर गूं करते दिन भर
हम भी होते काश कबूतर।

हाथ किसी के कभी न आते
यों फुर से फौरन उड़ जाते
ना होता पापा जी का डर
हम भी होते काश कबूतर।

साथ हवा के बातें करते
बस्ती के दिन रातें करते
ना होता स्कूल का चक्कर
हम भी होते काश कबूतर।

बिन पैसे हम खूब घूमते
यों उड़ते आकाश चूमते
पेड़ों पर होते अपने घर
हम भी होते काश कबूतर।

—सूर्यभानु गुप्त

नट खट हम हां नटखट हम

नट खट हम हां नटखट हम। करने निकले खट पट हम
आ गये लड़के पा गये हम। बंदर देख लुभा गये हम
बंदर को बिचकायें हम। बंदर दौड़ा भ ; हम
बच गये लड़के बच गये हम।

बर्र का छत्ता पा गये हम। बांस उठाकर आ गये हम
छत्ते लगे गिराने हम। ऊधम लगे मचाने हम
छत्ता टूटा बर्र उड़े। आ लड़कों पर टूट पड़े
झटपट हट कर छिप गये हम। बच गये लड़के बच गये हम

बिच्छू एक पकड़ लाये। उसे छिपाकर ले आये
सबक जांचने भिड़े गुरु। हमने नाटक किया शुरू
खोला बिच्छू चुपके से। बैठे पीछे दुबके से
बच गये गुरु जी खिसके हम। पिट गये लड़के बच गये हम

बुढ़िया निकली पहुंचे हम। लगे चिढ़ाने जम जम जम
बुढ़िया खीझे डरे न हम। ऊधम करना करें न कम
बुढ़िया आई नाकों दम। लगी पीटने धम-धम-धम
जान बचा कर भग गये हम। पिट गये लड़के, बच गये हम

—स्वर्ण सहोदर

एक, दो, तीन, चार

एक, दो, तीन, चार
आओ चलें कुतुब मीनार।
पांच, छः, सात, आठ
देखें चल के राजघाट।
नौ, दस, ग्यारा, बारा
चलें चांदनी चौक फव्वारा।
तेरा, चौदा, पन्द्रा, सोला
कनाट प्लेस में मुर्गा बोला।

—सर्वेश्वरदयाल सक्सेना
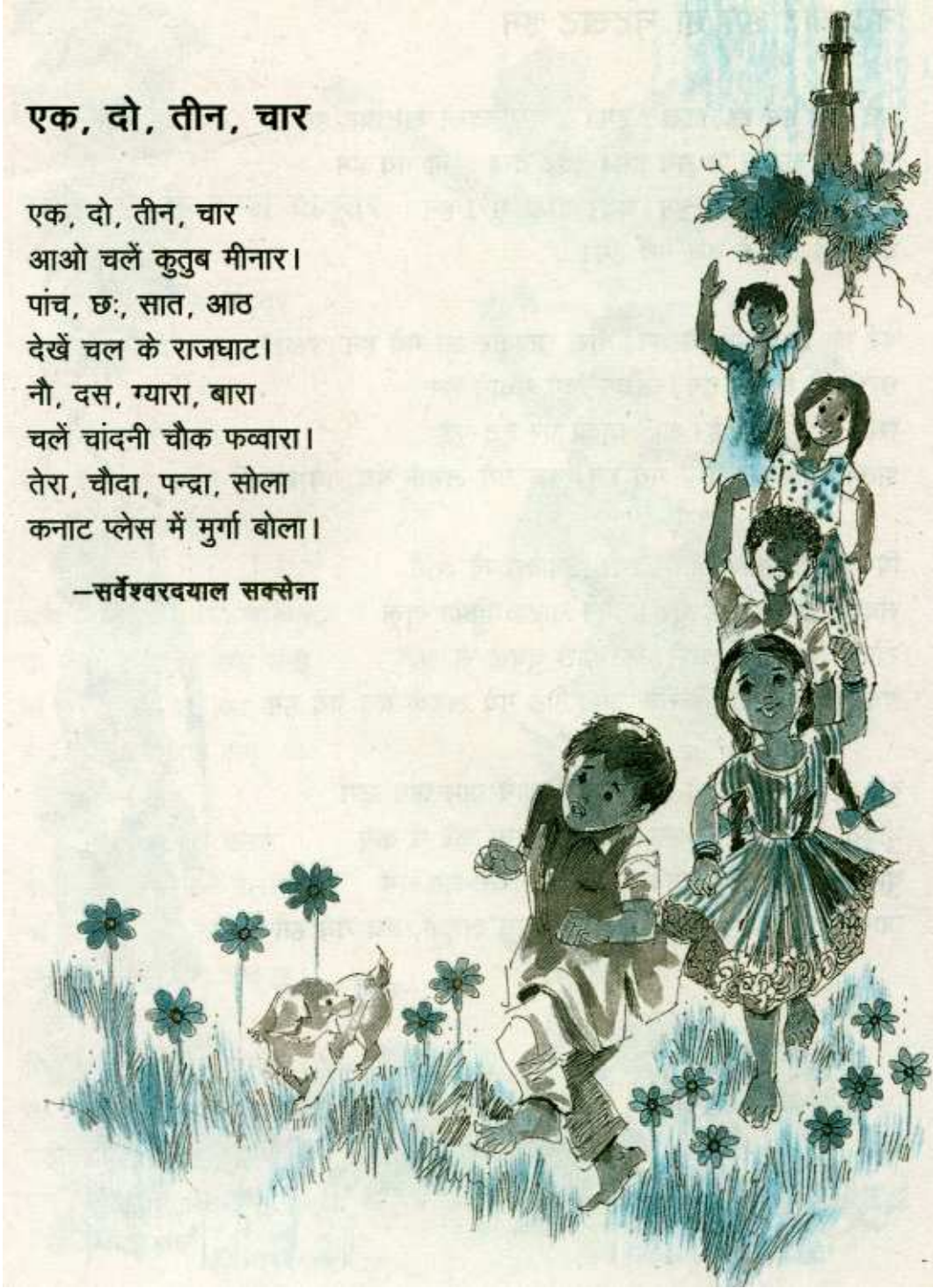
खजूर

फारस के नवाब ने भिजाये खजूर,
सात सौ सिपाही ले के आये खजूर।
राजा के दरबार बीच लाये खजूर,
राजा ने छांट छांट खाये खजूर।

रानी के महल में भिजाये खजूर,
रानी ने धूप में सुखाये खजूर।
डिब्बों में भर के रखवाये खजूर,
देख बांदी, कोई यह ना खाये खजूर।

डिब्बे गये टूट और राजा गये रुठ,
चूहों और गिलहरियों ने खाये लूट लूट।

—निरंकार देव सेवक
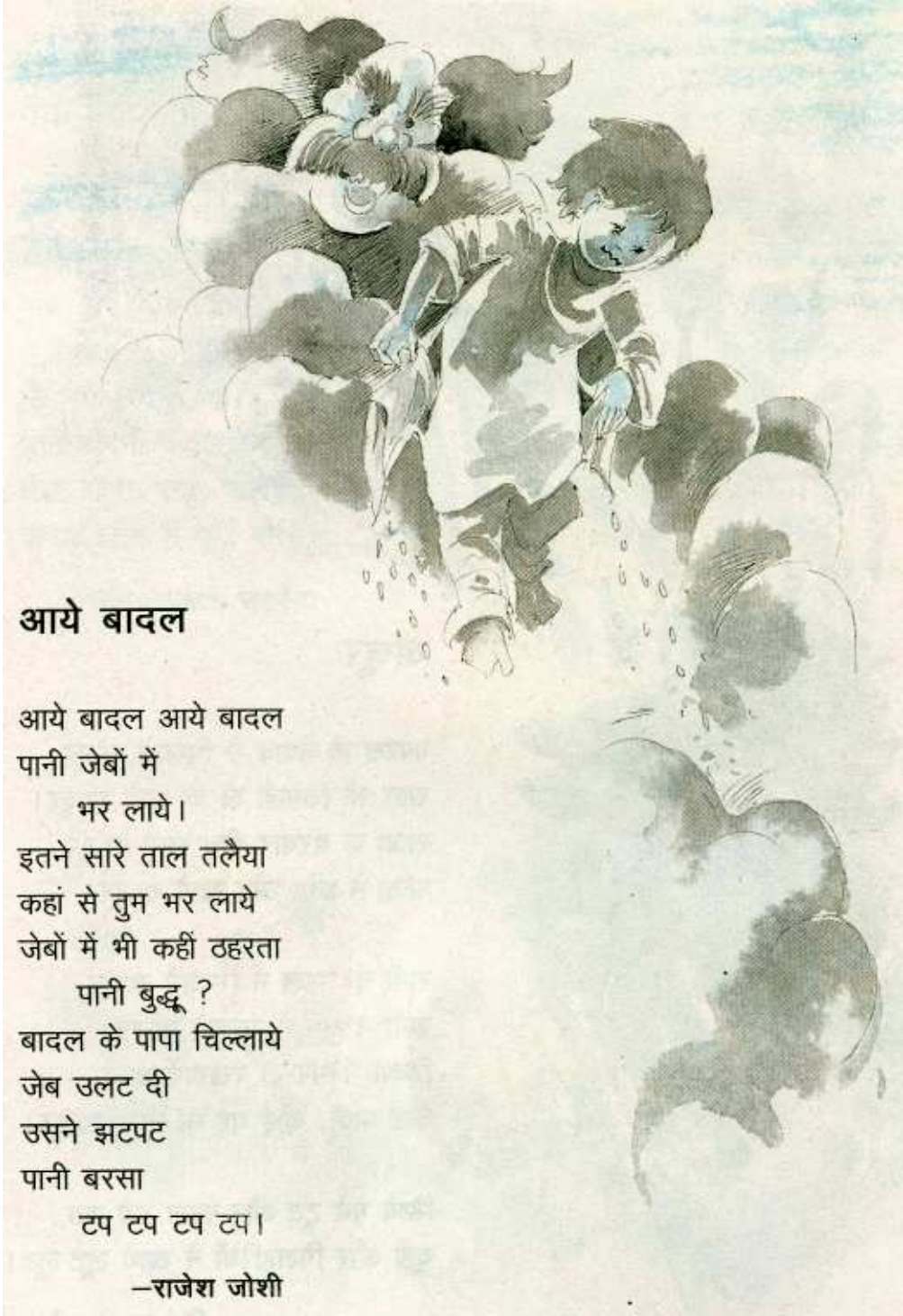
आये बादल

आये बादल आये बादल
पानी जेबों में
भर लाये।
इतने सारे ताल तलैया
कहां से तुम भर लाये
जेबों में भी कहीं ठहरता
पानी बुद्धू ?
बादल के पापा चिल्लाये
जेब उलट दी
उसने झटपट
पानी बरसा
टप टप टप टप।

—राजेश जोशी

रोज सबेरे कितने ऊँट

रोज सबेरे कितने ऊँट।
पीठ लाद ढेरों तरबूज
धीरे-धीरे कहाँ चले
जब पहुँचेंगे पेड़ तले
गर्दन ऊँची कर खायेंगे
कड़वी नीम चबा जायेंगे
मालिक हाँकेगा जब उनको
बल, बल, बल, बल गुस्सायेंगे !

—सुधा चौहान
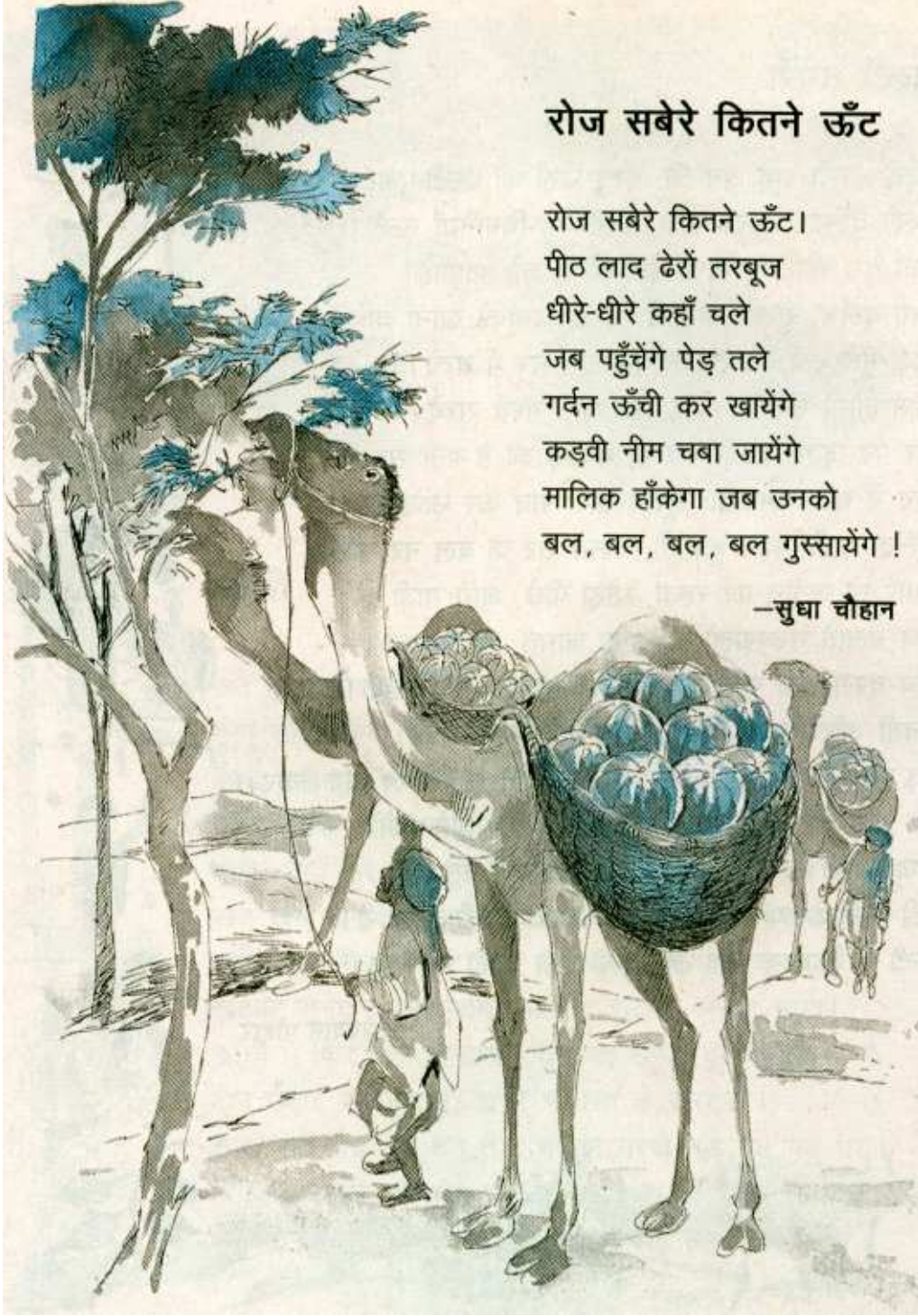
उल्टी नगरी

उल्टी नगरी एक अनोखी, वस्तु जहाँ की उल्टी-पुलटी।
उल्टी दुनिया, उल्टा पर्वत, उल्टे पेड़ चिमनियाँ उल्टी।।
देतीं दूध चीटियाँ, खरहे हल खीचें, चूहे हलवाहे।
पैसा दुर्लभ, सुलभ अशर्फी, भोजन सबको खाना चाहे।।
दाढ़ी-मूँछें रखें औरतें, मर्द खिलाते घर में बच्चे।
रहते लोगों में मकान ही, झूठे जीते मरते सच्चे।।
सर पर जूता, पगड़ी पग में, मच्छड़ की है बनी सवारी।
दिन में चाँद चमकता, सूरज सारी रात करे उजियारी।।
जलता पानी, आग बुझाती, चलते सर के बल नर नारी।
छप्पर तो जमीन पर रहता, घोड़ा पीछे, आगे गाड़ी।।
नाव चलाते मरुस्थलों में, साँझ जागते, सोते तड़के।
पाँच बरस तक रहते बूढ़े, साठ बरस में बनते लड़के।।
सुनती आँखें, कान देखते, नीचे बाबू कुर्सी ऊपर।
चढ़ जातीं पहाड़ पर नदियाँ, सिन्धु-झील से निकल निकलकर।।
एक बात का वहाँ बड़ा सुख, पढ़ते गुरु, पढ़ाते चेले।
मौज उड़ाते बैठ भिखारी, शाहंशाह चलाते ठेले।।
राही ज्यों के त्यों रह जाते, और चला करती है डगरी।
उल्टी सारी वस्तु जहां की, देखी ऐसी उल्टी नगरी।।

—राधेश्याम पोद्दार
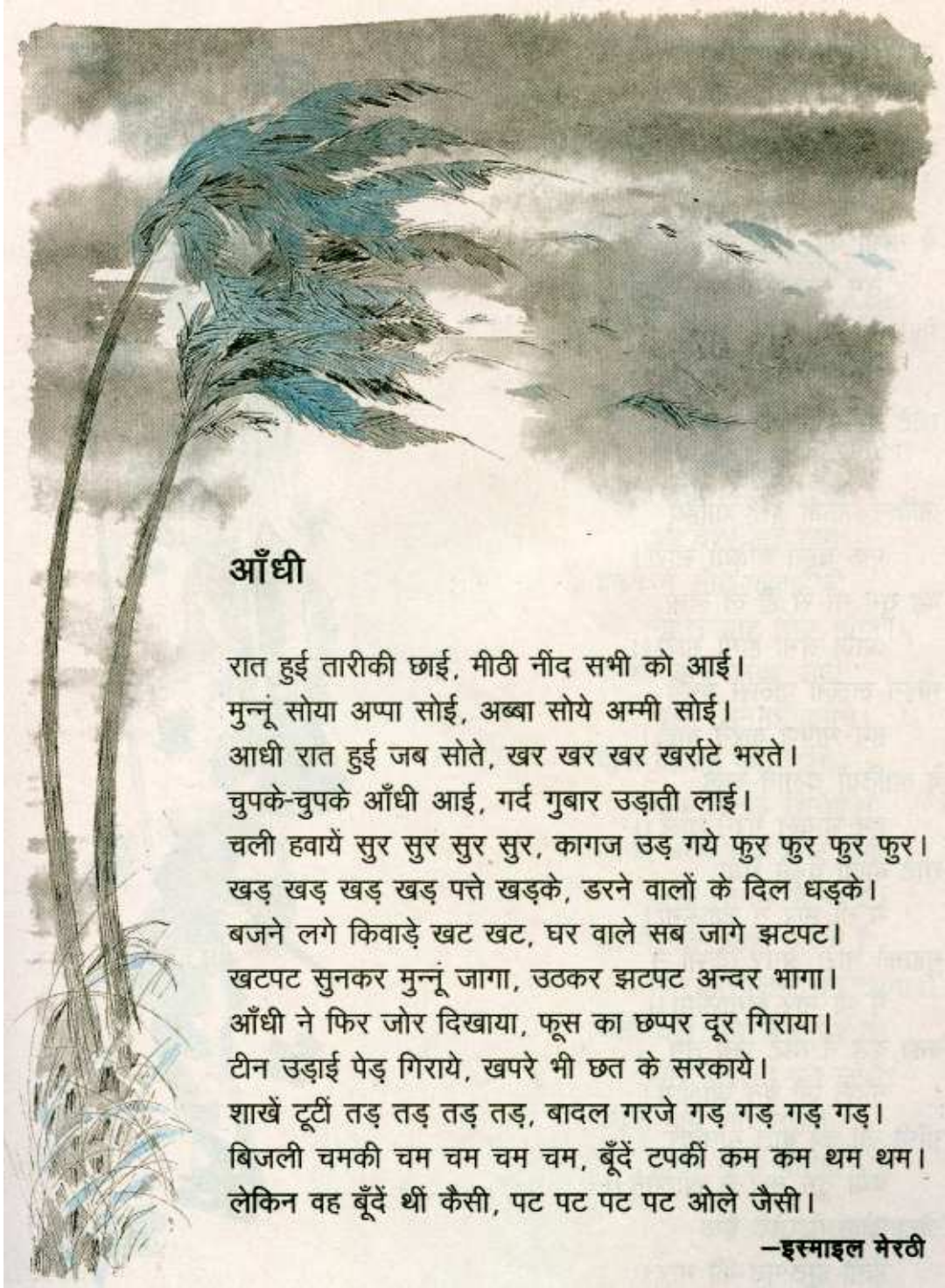
आँधी

रात हुई तारीकी छाई, मीठी नींद सभी को आई।
मुन्नूं सोया अप्पा सोई, अब्बा सोये अम्मी सोई।
आधी रात हुई जब सोते, खर खर खर खर्राटे भरते।
चुपके-चुपके आँधी आई, गर्द गुबार उड़ाती लाई।
चली हवायें सुर सुर सुर सुर, कागज उड़ गये फुर फुर फुर फुर।
खड़ खड़ खड़ खड़ पत्ते खड़के, डरने वालों के दिल धड़के।
बजने लगे किवाड़े खट खट, घर वाले सब जागे झटपट।
खटपट सुनकर मुन्नूं जागा, उठकर झटपट अन्दर भागा।
आँधी ने फिर जोर दिखाया, फूस का छप्पर दूर गिराया।
टीन उड़ाई पेड़ गिराये, खपरे भी छत के सरकाये।
शाखें टूटीं तड़ तड़ तड़ तड़, बादल गरजे गड़ गड़ गड़ गड़।
बिजली चमकी चम चम चम चम, बूँदें टपकीं कम कम थम थम।
लेकिन वह बूँदें थीं कैसी, पट पट पट पट ओले जैसी।

—इस्माइल मेरठी

सभा का खेल

सभा सभा का खेल आज हम
खेलेंगे जीजी आओ।
मैं गाँधी जी, छोटे नेहरू
तुम सरोजिनी बन जाओ।।
मेरा तो सब काम लंगोटी
गमछे से चल जायेगा।
छोटे भी खद्दर का कुर्ता
पेटी से ले आयेगा।।
लेकिन जीजी तुम्हें चाहिये
एक बहुत बढ़िया सारी।
वह तुम माँ से ही ले लेना
आज सभा होगी भारी।।
मोहन लल्ली पुलिस बनेंगे
हम भाषण करने वाले।
वे लाठियाँ चलाने वाले
हम घायल मरने वाले।।
छोटे बोला देखो भैया
मैं तो मार न खाऊँगा।
मुझको मारा अगर किसी ने
मैं भी मार लगाऊँगा।।
कहा बड़े ने छोटे जब तुम
नेहरू जी बन जाओगे।
गाँधी जी की बात मानकर
क्या तुम मार न खाओगे।।
खेल खेल में छोटे भैया
होगी झूठ-मूठ की मार।

चोट न आयेगी नेहरू जी
अब तुम हो जाओ तैयार।।
हुई सभा प्रारम्भ कहा
गाँधी ने चरखा चलवाओ।
नेहरू जी भी बोले भाई
खद्दर पहनो पहनाओ।।
उठ कर फिर देवी सरोजिनी
धीरे से बोलीं बहनों।
हिन्दू मुस्लिम मेल बढ़ाओ
सभी शुद्ध खद्दर पहनों।।
छोड़ो सभी विदेशी चीजें
लो देशी सूई तागा।
इतने में लौटे काका जी
नेहरू सीट छोड़ भागा।।
काका आये काका आये
चलो सिनेमा जायेंगे।
घोरी दीक्षित को देखेंगे
केक मिठाई खायेंगे।।
जीजी चलो सभा फिर होगी
अभी सिनेमा है जाना।
आओ खेल बहुत अच्छा है
फिर सरोजिनी बन जाना।।
चलो चलें अब जरा देर को
घोरी दीक्षित बन जायें।
उछलें कूदें शोर मचावें
मोटर गाड़ी दौड़ावें।।

—सुभद्रा कुमारी चौहान

तीतर

लड़को इस झाड़ी के भीतर
छिपा हुआ है जोड़ा तीतर
फिरते थे यह अभी यहीं पर
चारा चुगते हुए जमीं पर

एक तीतरी है इक तीतर
हमें देख कर भागे भीतर
आओ इनको जरा डरा कर
ढेला मार निकालें बाहर

यह देखो वह दोनों भागे
खड़े रहो चुप बढ़ो न आगे

अब सुन लो इनकी गिटकारी
एक अनोखे ढंग की प्यारी
तीइत्तड़ तीइत्तड़ तीइत्तड़ तीइत्तड़
नाम इसी से इनका तीतर !

—श्रीधर पाठक
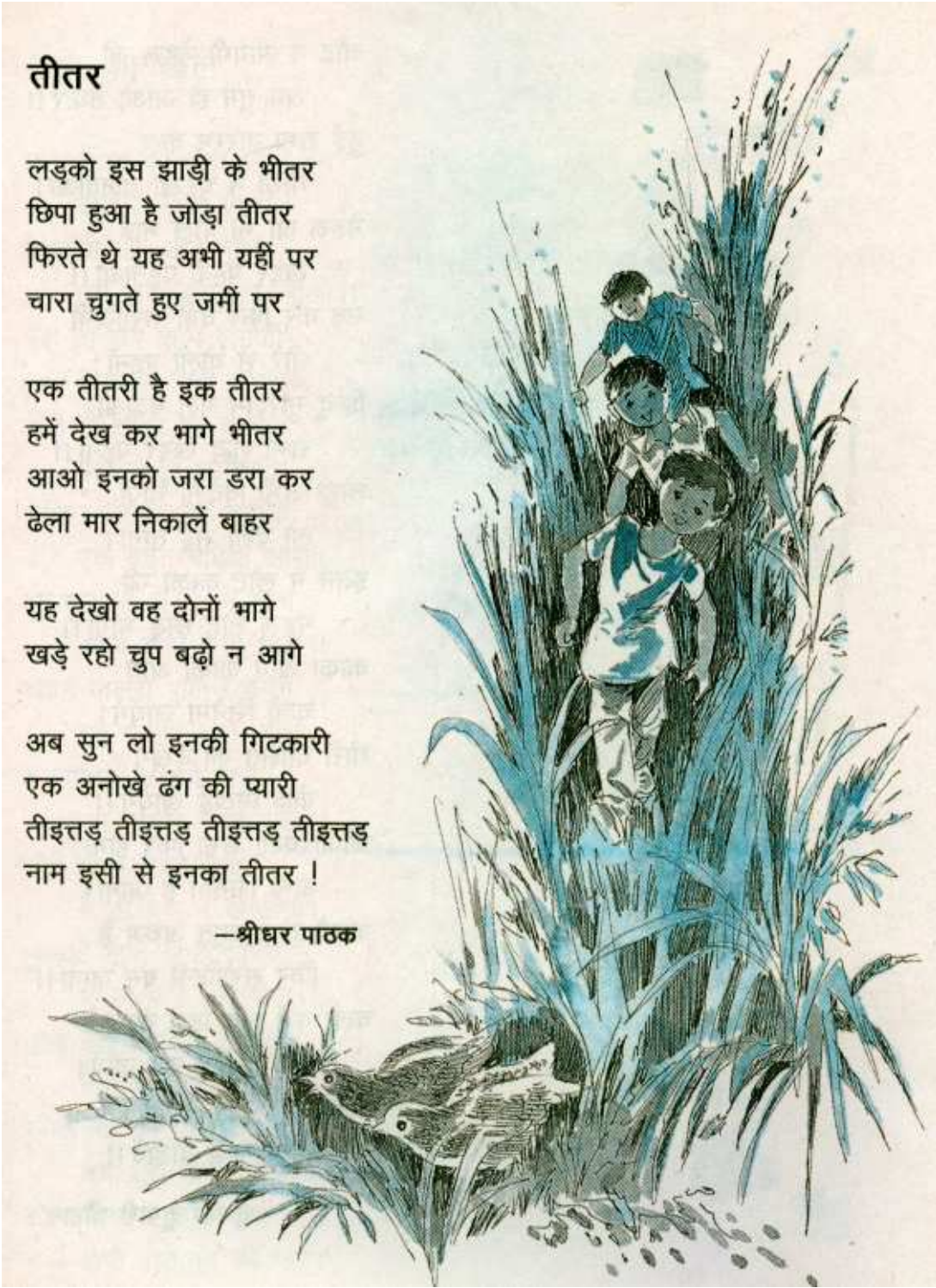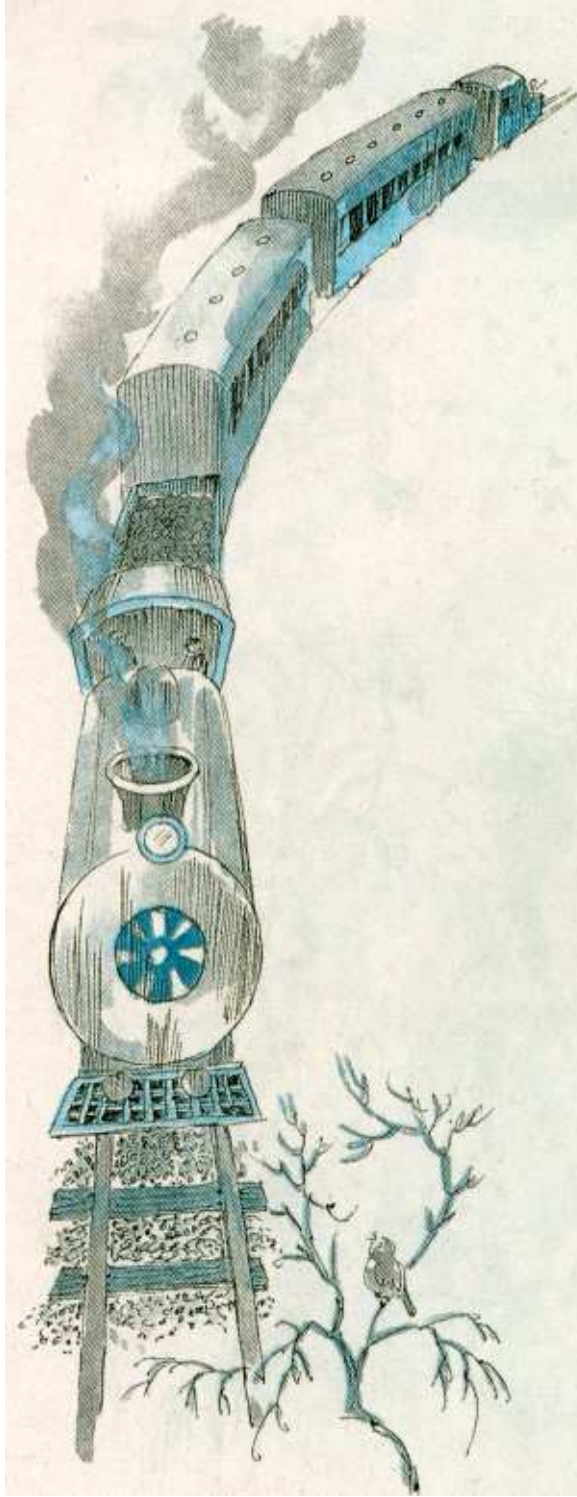
मेरी रेल

छूटी मेरी रेल।
रे बाबू, छूटी मेरी रेल।
हट जाओ, हट जाओ भैया !
मैं न जानूं फिर कुछ भैया !
टकरा जाये रेल।

धक्-धक् धक्-धक्, धू-धू, धू-धू !
भक्-भक्, भक्-भक्, भू-भू, भू-भू !
छक्-छक् छक्-छक्, छू-छू, छू-छू !
करती आई रेल।

एंजिन इसका भारी-भरकम।
बढ़ता जाता गमगम गमगम।
धमधम धमधम, धमधम धमधम।
करता ठेलम ठेल

सुनो गार्ड ने दे दी सीटी।
टिकट देखता फिरता टीटी।
सटी हुई वीटी से वीटी।
करती पेलम पेल।

छूटी मेरी रेल।

—सुधीर

मधुमक्खी

गुन-गुन-गुन-गुन गुन-गुन-गुन !
छेड़ रही यह कैसी धुन ?
"मैं मेहनत से करती काम !"
मधुमक्खी कहती है, सुन !

—चंद्रपालसिंह यादव 'मयंक'

रानी बिटिया

रानी बिटिया चली घूमने
दिल्ली से आगे बढ़
चलते चलते चलते चलते
पहुंच गई चंडीगढ़।

चंडीगढ़ से जयपुर पहुंची
जयपुर से रामेश्वर
रामेश्वर से चलते चलते
लौट चली आई घर।

मां ने पूछा—''रानी बिटिया
कहां गई थी बाहर''
बिटिया बोली—''कहीं नहीं मां
मैं थी घर के अंदर।

''घर के अंदर ? रानी बिटिया
ऐसा झूठ सरासर ?''
''झूठ नहीं मां ! सच कहती हूं
भारत है मेरा घर।''

—निरंकार देव सेवक

बंदर

देखो लड़को बंदर आया। एक मदारी उसको लाया
उसका है कुछ ढंग निराला। कानों में पहने है बाला
फटे पुराने रंग बिरंगे। कपड़े हैं उसके बेढंगे
मुंह डरावना आंखें छोटी। लंबी दुम थोड़ी सी मोटी
भौंह कभी है वह मटकाता। आंखों को है कभी नचाता
ऐसा कभी किलकिलाता है। मानो अभी काट खाता है
दांतों को है कभी दिखाता। कूद फांद है कभी मचाता
कभी घुड़कता है मुंह बाकर। सब लोगों को बहुत डराकर
कभी छड़ी लेकर है चलता। है वह यों ही कभी मचलता
है सलाम को हाथ उठाता। पेट लेट कर है दिखलाता
ठुमक ठुमक कर कभी नाचता। कभी कभी है टके जांचता
देखो बंदर सिखलाने से। कहने सुनने समझाने से
बातें बहुत सीख जाता है। कई काम कर दिखलाता है
बनो आदमी तुम पढ़-लिखकर। नहीं एक तुम भी हो बंदर।

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'
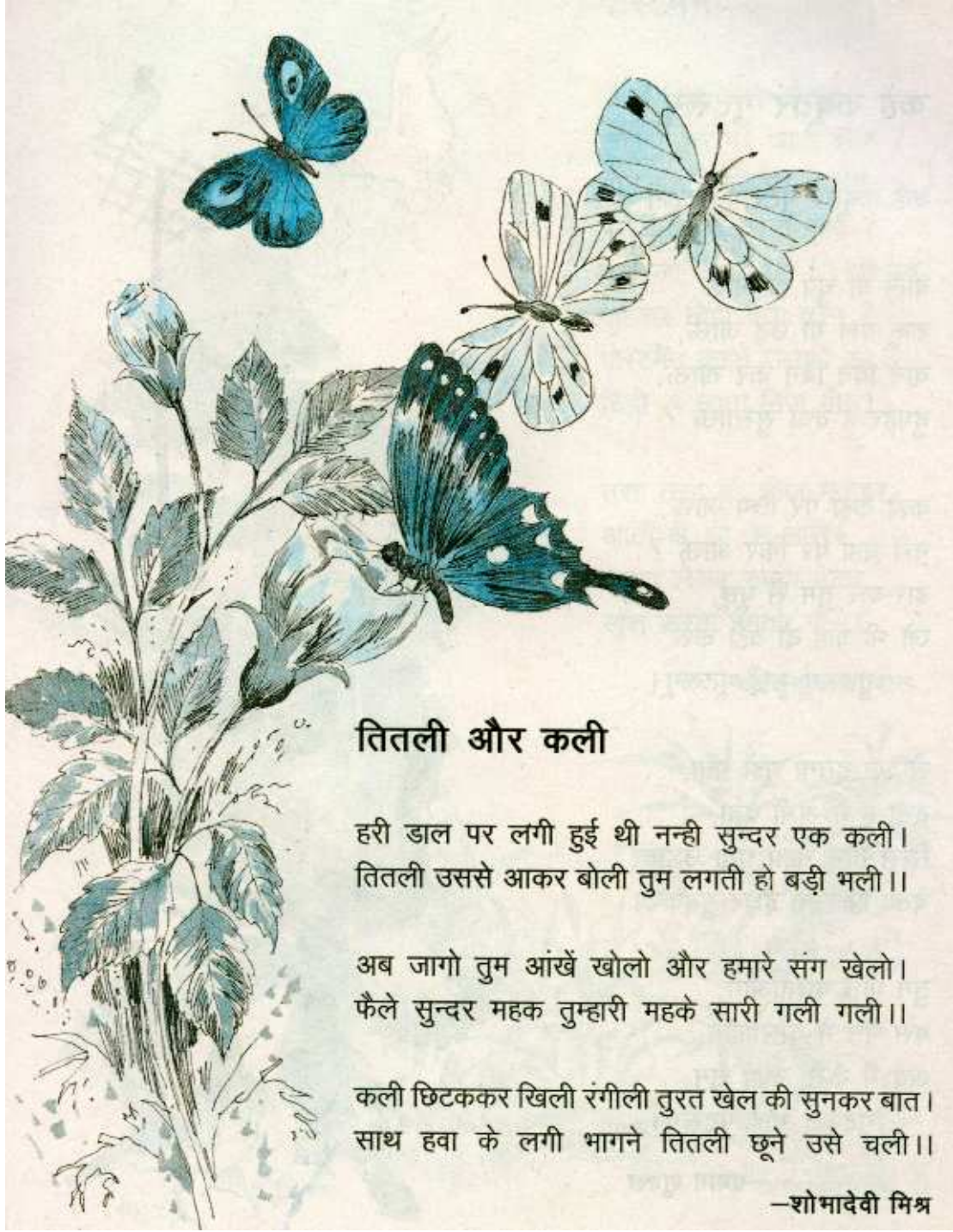
तितली और कली

हरी डाल पर लगी हुई थी नन्ही सुन्दर एक कली।
तितली उससे आकर बोली तुम लगती हो बड़ी भली।।

अब जागो तुम आंखें खोलो और हमारे संग खेलो।
फैले सुन्दर महक तुम्हारी महके सारी गली गली।।

कली छिटककर खिली रंगीली तुरत खेल की सुनकर बात।
साथ हवा के लगी भागने तितली छूने उसे चली।।

—शोभादेवी मिश्र

कहे कबूतर गुटरूगूं

कहे कबूतर गुटरूगूं-गुटरूगूं
भाई गुटरूगूं
बोलूं या चुप हो जाऊं,
रुकूं यहां या उड़ जाऊं,
दाने बिन बिन कर खाऊं,
दुपहर है क्या सुस्ताऊं ?

कहो कहां पर छिप जाऊं,
नहीं यहां पर फिर आऊं ?
बार-बार तुम से पूछूं,
जो भी कह दो वही करूं,
गुटरूगूं भाई गूटरूगूं।

लेकिन इतना मुझे पता,
देता हूं मैं अभी बता,
जिस दिन चला गया उड़कर
देखा फिर ना इधर मुड़कर।

तुम पीछे पछताओगे,
बस मन में दुहराओगे,
अब मैं कैसे, कहां सुनूं,
गुटरूगूं भाई गुटरूगूं।

—प्रयाग शुक्ल

पोस्टमैन

पीला पीला थैला लेकर
अहा ! द्वार पर आता कौन ?
मौन मौन रहने की आदत
पर खबरें दे जाता कौन ?
बाबू जी ! बाबू जी ! ! लो यह
कहकर चिट्ठी देता कौन ?
पोस्टमैन कहते उसको जो
चिट्ठी ले आता निज मौन।

तरह तरह की चीज मनोहर
आती वी. पी. से भारी।
रुपया लेकर रुपया देकर
खुश करता हमको भारी।

—चंद्रकुमार अग्रवाल
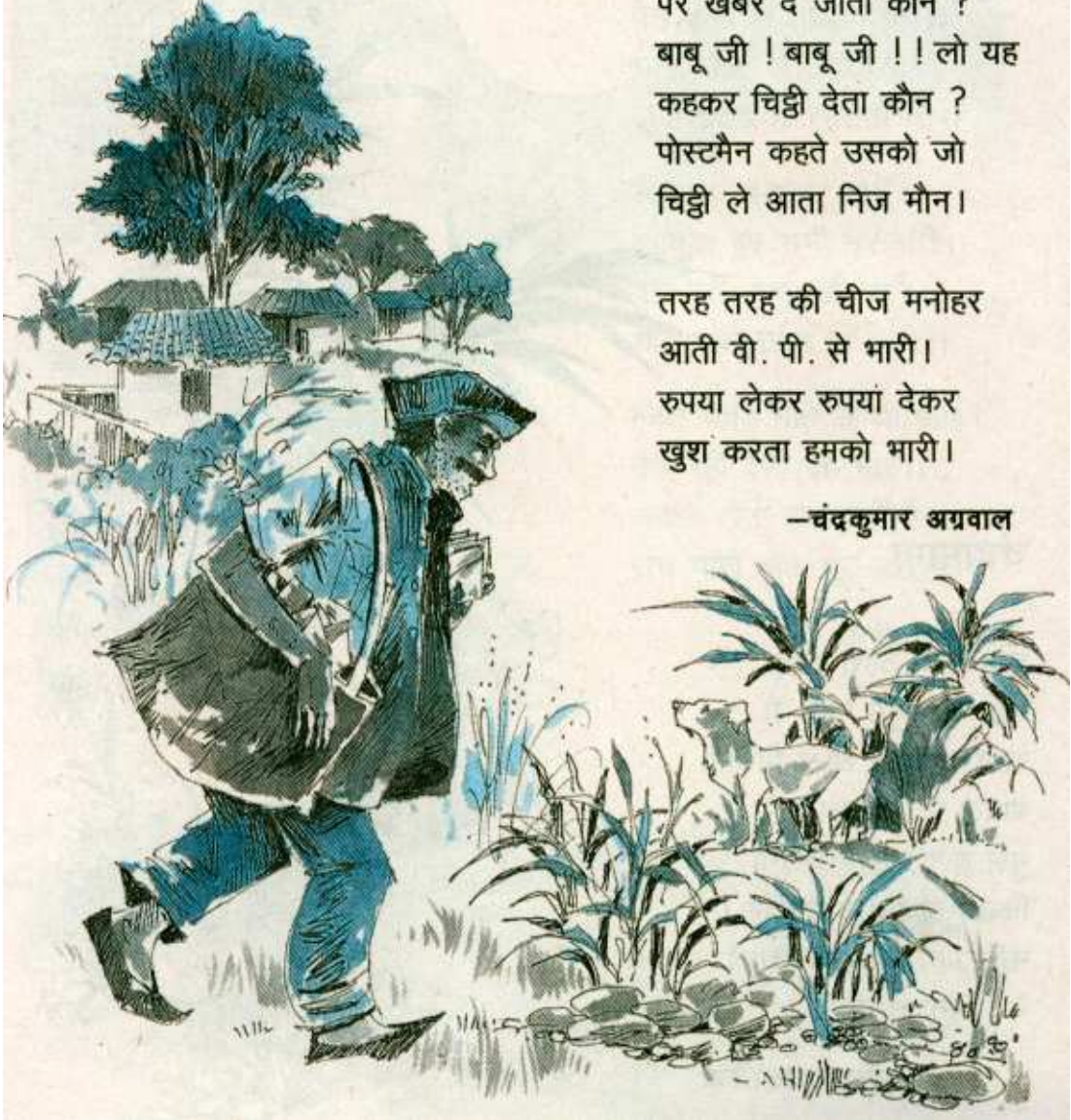
चंदामामा

चंदा मामा ठहरो थोड़ा
कहां चले तुम जाते हो ?
खेल रहे क्या आंख मिचौनी
बादल में छिप जाते हो ?
मुझे बुला लो मैं देखूंगा
कितने हो छिपने में तेज !
नहीं पकड़ पाओगे मुझको
मैं दौड़ूंगा तुमसे तेज।

—शकुंतला सिरोठिया

आंधी

संध्या के पहले थी आई।
आंधी हहर हहर कर आई।।
उसने चारों ओर उड़ाई।
धूल खूब ही देखो छाई।।

धर अपना तब रूप भयंकर।
जाकर चढ़ी शहर के ऊपर।।
ध्वजा-पताका तोड़ गिराया।
था लोगों ने जिन्हें सजाया।।

फुलबाड़ी-बागों में धंसकर।
डाले तोड़ फूल-फल हंसकर।।
कलमी आमों को टपकाया।
जिससे माली ने दुख पाया।।

सड़कों पर से लड़के भागे।
मानो सोते से हों जागे।।
बनियों ने दूकान बढ़ाई
चौंक पड़े कुंजड़े-हलवाई।।

शहर छोड़ आगे वह पहुंची।
नहीं जरा भी मन में सकुची।।
गंवई-गांव खेत सब घेरा।
और किया उन पर निज डेरा।।

छानी-छप्पर उड़ा बहाये।
पेड़ बहुत से तोड़ गिराये।।
भागी तेजी से जाती थी।
अति प्रचंड हो हहराती थी।।

अंधाधुंध देखकर भारी।
व्याकुल हुए सभी नर-नारी।।
यही नहीं, पशु-पक्षी सारे।
भागे इधर-उधर हो न्यारे।।

जिस प्रचंड गति से थी आई।
नहीं रही वैसी वह भाई।।
सबका होता हाल यही है।
सच मानो कुछ झूठ नहीं है।।

—देवीदत्त शुक्ल

मां मुझे बताओ

कभी बता क्या तूने कूता ?
क्यों करता है मेरा जूता ?
मां, चरमर-चरमर चरर-चरर।

क्यों मीठा पानी का सोता-
जगता रहता कभी न सोता ?
मां, बहता झरमर झरर-झरर।

जब काले बादल छहराते,
वे क्यों रह-रहकर घहराते ?
मां, घरमर-घरमर घरर-घरर।

जब कोई बात बिगड़ जाती,
तू क्यों मुझ पर गुस्सा खाती ?
मां, तरमर-तरमर तरर-तरर।

—सुधीर
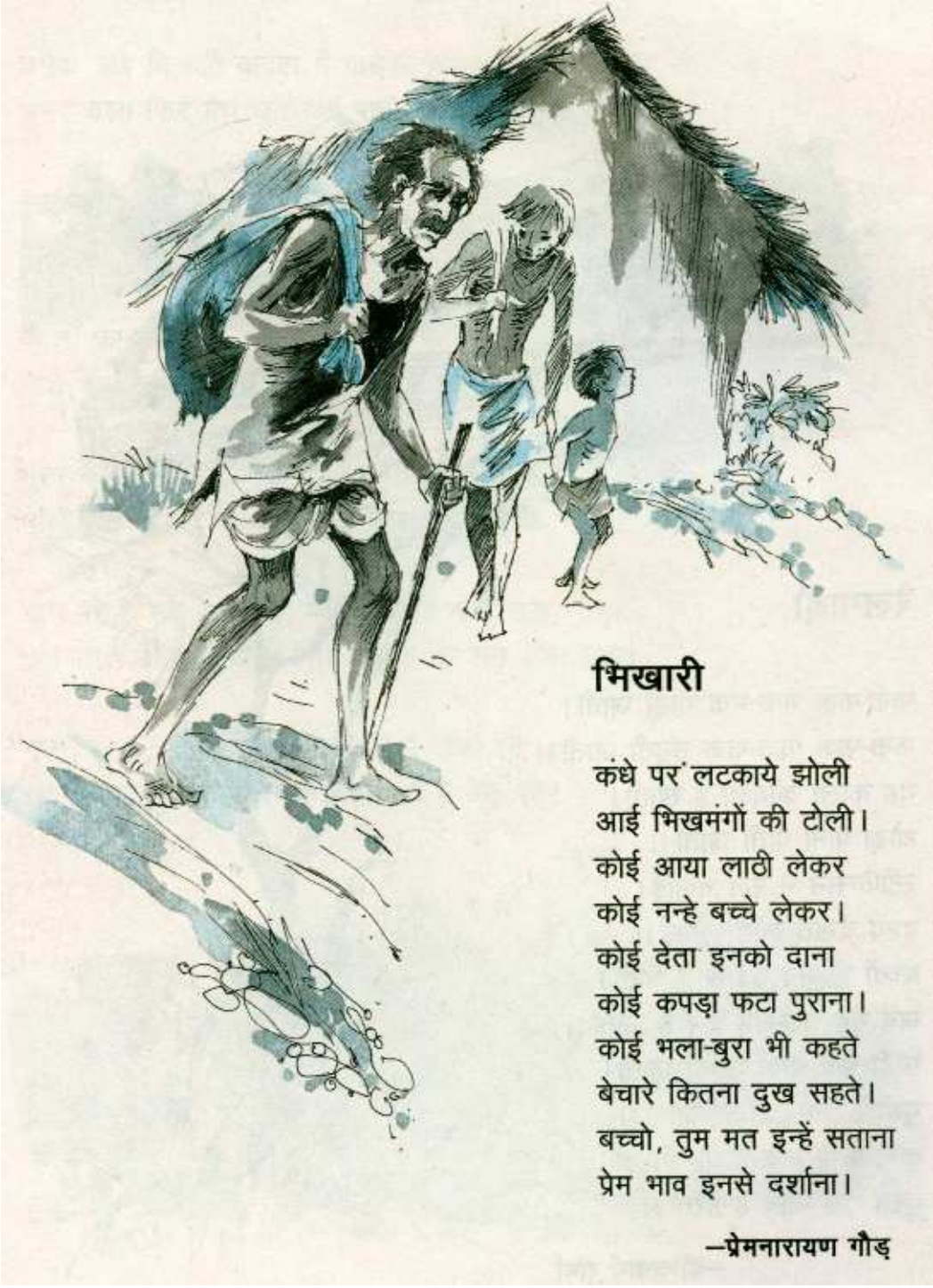
भिखारी

कंधे पर लटकाये झोली
आई भिखमंगों की टोली।
कोई आया लाठी लेकर
कोई नन्हे बच्चे लेकर।
कोई देता इनको दाना
कोई कपड़ा फटा पुराना।
कोई भला-बुरा भी कहते
बेचारे कितना दुख सहते।
बच्चो, तुम मत इन्हें सताना
प्रेम भाव इनसे दर्शाना।

—प्रेमनारायण गौड़
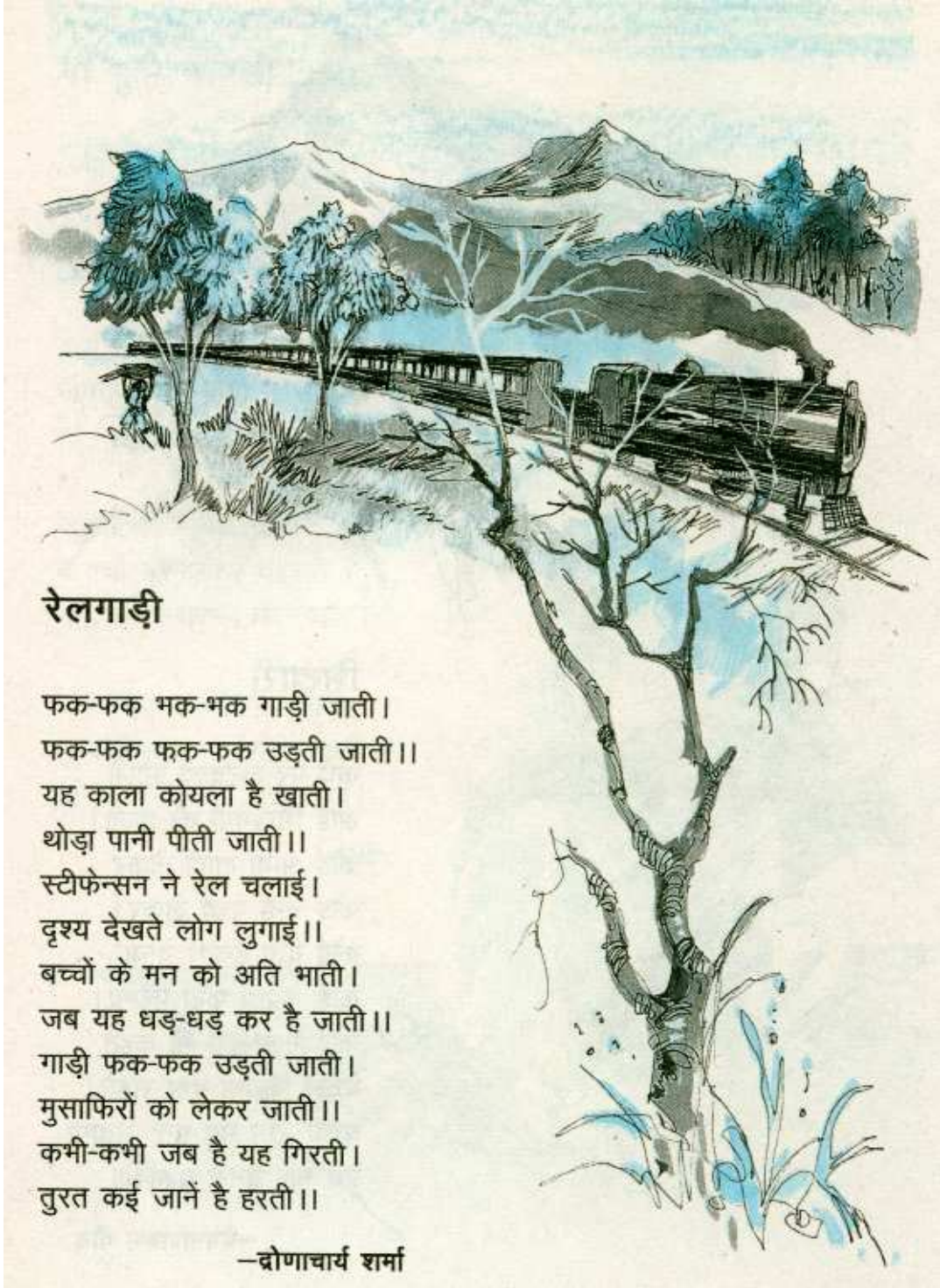
रेलगाड़ी

फक-फक भक-भक गाड़ी जाती।
फक-फक फक-फक उड़ती जाती।।
यह काला कोयला है खाती।
थोड़ा पानी पीती जाती।।
स्टीफेन्सन ने रेल चलाई।
दृश्य देखते लोग लुगाई।।
बच्चों के मन को अति भाती।
जब यह धड़-धड़ कर है जाती।।
गाड़ी फक-फक उड़ती जाती।
मुसाफिरों को लेकर जाती।।
कभी-कभी जब है यह गिरती।
तुरत कई जानें है हरती।।

—द्रोणाचार्य शर्मा

मेघ

चमक उठी बिजली बादल में कड़का कड़का शोर हुआ,
उमर चला फिर मेघ घुमरकर पानी चारों ओर हुआ।

हवा बह रही ठंडी-ठंडी, बूंदें तिरछी गिरती हैं,
पूरब से जो छटी घटाएं पश्चिम जाकर घिरती हैं।

काला कम्बल ओढ़े वन में भीग रहा है चरवाहा,
गैया भीग रही है उसकी, भीग रहा है हलवाहा।

मुन्नू का वह बना घरौंदा टप-टप टप-टप चूता हैं,
नाली में वह बहा जा रहा जाने किसका जूता है !

नाच रहे हैं भरे खुशी से, मेंढक टर-पों बोल उठा,
एक साल के बाद आज फिर चातक का मन डोल उठा।

मुन्नू, मुन्ना, मोहन रग्घू सब पानी में खेल रहे,
सब कागज की नाव बनाकर धारा में हैं ठेल रहे।

—युगल

ईलम डील

ईलम डील खेलो
आओ खेलो ईलम डील।
गेंद जो उछाली ले के
भाग गई चील।
रस्ते में पड़ी एक
बहुत बड़ी झील।

जिसके बीचों बीच में थी
ऊंची-सी कील।
चील ज्यों ही बैठी उस पर
टूट गई कील।

औंधे मुंह पानी में
जाके गिरी चील।
गेंद रही तैरती औ
डूब गई चील।

ईलम डील खेलो आओ
खेलो ईलम डील।

—निरंकार देव सेवक

नंदू का जुकाम

बहुत जुकाम हुआ नंदू को
एक रोज वह इतना छींका
इतना छींका इतना छींका
इतना छींका इतना छींका
सब पत्ते गिर गये पेड़ के
धोखा हुआ उन्हें आंधी का

—रामनरेश त्रिपाठी

नारंगी

नारंगी रंग की नारंगी
बेच रहा फलवाला गाकर
और बजाता है सारंगी

चमक रहा है छिलका पीला
सुन्दर फल है बड़ा रसीला
प्यास बुझे मन खुश हो जाता
ढीली तबियत होती चंगी

—सुधा चौहान

कितनी लंबी है सड़क

कितनी लंबी है सड़क
कितना ऊंचा है पहाड़
कितनी छोटी है चिड़िया
पेड़ है कितना बड़ा

तेज कितनी है नदी
पत्थर कितना गोल है
घास है कितनी हरी
फूल कितना लाल है !

—कृष्ण कुमार

लाल टमाटर

लाल टमाटर लाल टमाटर, मैं तो तुमको खाऊंगा
अभी न खाओ मैं कुछ दिन में और अधिक पक जाऊंगा

लाल टमाटर लाल टमाटर, मुझको भूख लगी भारी
भूख लगी है तो तुम खा लो यह गाजर मूली सारी

लाल टमाटर लाल टमाटर, मुझको तो तुम भाते हो
तुमको जो अच्छा लगता है उसको तुम क्यों खाते हो

लाल टमाटर लाल टमाटर, अच्छा तुम्हें न खाऊंगा
मगर तोड़ कर डाली पर से अपने घर ले जाऊंगा

—निरंकार देव सेवक

चक्कर

आओ एक बनाएं चक्कर
फिर उस चक्कर में इक चक्कर
फिर उस चक्कर में इक चक्कर
फिर उस चक्कर में इक चक्कर
और बनाते जाएं जब तक
ऊब न जाएं थक कर।

फिर सबसे छोटे चक्कर में
म्याउं एक बिठाएं
और बाहरी हर चक्कर में
चूहों को दौड़ाएं।

दौड़-दौड़ कर सभी थकें
हम बैठें मारे मक्कर,
नींद लगे हम सो जाएं
वे देखें उझक-उझक कर।

आओ एक बनाएं चक्कर।

—सर्वेश्वरदयाल सक्सेना
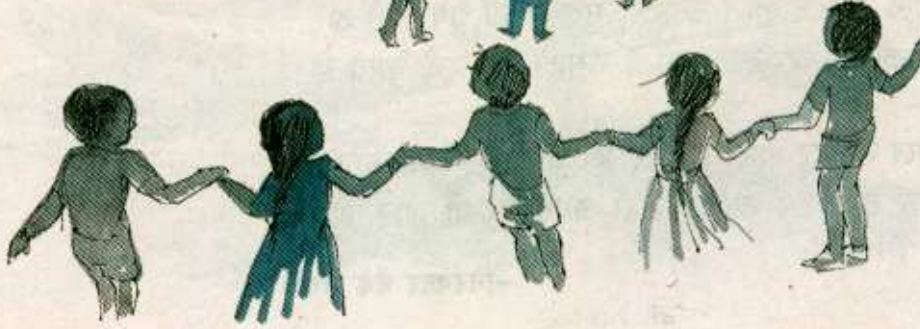
सोओ सुख की निंदिया

सूरज अब थक गया
जा रहा है अपने घर सोने।
तपती धरती को आई है
ठंडी ओस भिगोने
झांक रहे हैं आसमान में
तारे कोने कोने
तोता सोता, मैना सोती
सो जा श्याम सलोने !

—शकुंतला सिरोठिया

गोलू के मामा

गोलू के मामा आए
सब देख रहे मुंह बाए
मुंह उनका है गुब्बारा
था किसने उन्हें पुकारा
नारंगी उनको भाए
गोलू के मामा आए।

वे पूरब से हैं आते
गोलू से गप्प लड़ाते
हौले से उसे सुलाकर
फिर पच्छिम को उड़ जाते।

सच बात अगर मैं बोलूं
तो पोल पुरानी खोलूं
सूरज का फटा पजामा
सिलते गोलू के मामा।

पर जाने क्या जादू है
रहते हैं सब पर छाए
सब देख रहे मुंह बाए
गोलू के मामा आए।

ये बड़े दिनों में आये
झोले में हैं कुछ लाए
हमको तो पता चले तब
जब गोलू हमें खिलाए।

लो दिखा-दिखा नारंगी
बन जाते एक बताशा
यूं सबको देते झांसा
करते ये खूब तमाशा।

हर पन्द्रह दिन में कैसे
आ जाते बिना बुलाए
मैं देख रहा मुंह बाए
गोलू के मामा आए !

—रमेशचंद्र शाह

बतूता का जूता

इब्न बतूता पहन के जूता
निकल पड़े तूफान में,
थोड़ी हवा नाक में घुस गई
घुस गई थोड़ी कान में।

कभी नाक को, कभी कान को
मलते इब्न बतूता,
इसी बीच में निकल पड़ा
उनके पैरों का जूता।

उड़ते उड़ते जूता उनका
जा पहुंचा जापान में
इब्न बतूता खड़े रह गये
मोची की दूकान में !

—सर्वेश्वरदयाल सक्सेना
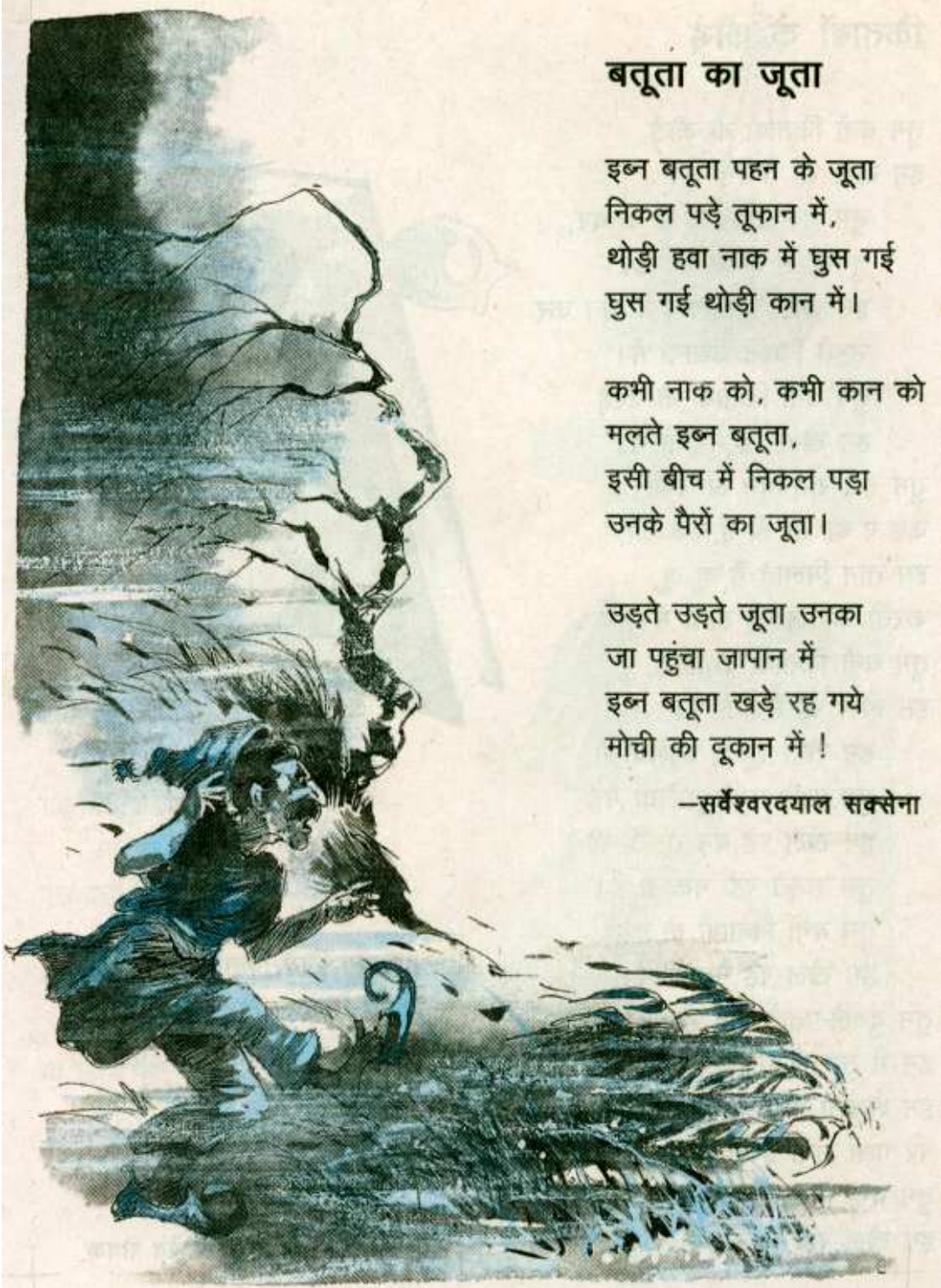
किताबों के कीड़े

तुम बनों किताबों के कीड़े,
हम खेल रहे मैदानों में।

तुम घुसे रहो घर के अन्दर,
तुमको है पंडित का डर।
हम सखा तितलियों के बन कर
उड़ते फिरते उद्यानों में।
तुम बनों किताबों के कीड़े
हम खेल रहे मैदानों में।

तुम रटो रात-दिन अंगरेजी
कह ए बी सी डी ई एफ जी,
हम तान मिलाते हैं कू कू,
करती कोयल की तानों में।
तुम बनों किताबों के कीड़े,
हम खेल रहे मैदानों में।

हम रहते फूलों, कलियों में,
तुम रहते गन्दी गलियों में,
हम खेल रहे बन ती-ती-ती
तुम सड़ते रहो मकानों में।
तुम बनों किताबों के कीड़े,
हम खेल रहे मैदानों में।

तुम दुबले-पतले दीन हीन,
हम में तुम जैसे बनें तीन।
हम शैतानों के नेता हैं,
पर पास सदा इम्तहानों में।
तुम बनों किताबों के कीड़े
हम खेल रहे मैदानों में।

तुम लिये किताबों का बोझा,
हम उछल कूद खाते गोझा,
तुम में हम में है भेद वही,
जो मूर्खों में, विद्वानों में।
तुम बनों किताबों के कीड़े,
हम खेल रहे मैदानों में।

—निरंकार देव सेवक

घी की मटकी

बिल्ली आई
एक कलूटी।
छींके ऊपर
देखी मटकी।
कूदी, लपकी
उछली, लटकी।
यहां चढ़ी
वहां से टपकी।
ऊपर नीचे
उलझी-अटकी।
मगर मिली ना
घी की मटकी।
अम्मा की फिर
टूटी झपकी।
गई बेचारी
मारी-डपटी।
पछताती फिर
भागी सटकी।
भाग्य कहां जो
छींका टूटे।
या फिर फूटे
घी की मटकी।

—पद्मा चौगांवकर

क्यों

पूछूं तुमसे एक सवाल
झट पट उत्तर दो गोपाल
मुन्ना के क्यों गोरे गाल ?
पहलवान क्यों ठोके ताल ?
भालू के क्यों इतने बाल ?
चले सांप क्यों तिरछी चाल ?
नारंगी क्यों होती लाल ?
घोड़े के क्यों लगती नाल ?
झरना क्यों बहता दिन रात ?
जाड़े में क्यों कांपे गात ?
हफ्ते में क्यों दिन हैं सात ?
बुड्ढ़ों के क्यों टूटे दांत ?
ढम ढम ढम क्यों बोले ढोल ?
पैसा क्यों होता है गोल ?
मीठा क्यों होता है गन्ना ?
क्यों चम चम चमकीला पन्ना ?
लल्ली क्यों खेल रही गुड़िया ?
बनिया बांध रहा क्यों पुड़िया ?
बालक क्यों डरते सुन हौआ ?
कांव कांव क्यों करता कौआ ?
नानी को क्यों कहते नानी ?
पानी को क्यों कहते पानी ?
हाथी क्यों होता है काला ?
दादी फेर रही क्यों माला ?

पक कर फल क्यों होता पीला ?
आसमान क्यों नीला नीला ?
आंख मूंद क्यों सोते हो तुम ?
पिटने पर क्यों रोते हो तुम ?

—श्रीनाथ सिंह

चूं चूं चूं चूं म्याउं म्याउं

चूं चूं चूं चूं चूहा बोले
म्याऊं म्याऊं बिल्ली
ती ती कीरा बोले
झीं झीं झीं झीं झिल्ली
किट किट किट बिस्तुइया बोले
किर किर किर गिलहैरी
तुन तुन तुन इकतारा बोले
पी पी पी पिपहैरी
टन टन टन टन घंटी बोले
ठन ठन ठन्न रुपैया
बछड़ा देखे बां बां बोले
तेरी प्यारी गइया
ठनक ठनक कर तबला बोले
डिम डिम डिम डिम डौंडी
टेढ़ी मेढ़ी बातें बोले
बाबाजी की लौंडी

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

दीया

पत्ता बोले–
खड़ खड़ खड़,
कहें पटाखे–
भड़ भड़ भड़,
छुर छुर छुर बोलें–
फुलझरियाँ
राकेट बोले–
तड़ तड़ तड़ !

मगर दीया कुछ भी न बोले
अरे ! शर्म से गड़ गड़ गड़।

–सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

चला चांद से

चला चांद से चंदू बनिया
पहने अचकन और सुथनिया।
बनकर पूरा छैल चिकनिया
बोने को धरती पर धनिया।
उसने बोया खेत निपनिया
उसमें उगा न एको धनिया।
बांका तिरछा छैल चिकनिया
पहने अचकन और सुथनिया
लगा सोचने चंदू बनिया
कैसे उगा न मेरा धनिया।
धरती बोली—सुन रे बनिया
बनकर पूरे छैल चिकनिया।
बोये हो तुम खेत निपनिया
कैसे उपजे उसमें धनिया।

—बानरेंद्र
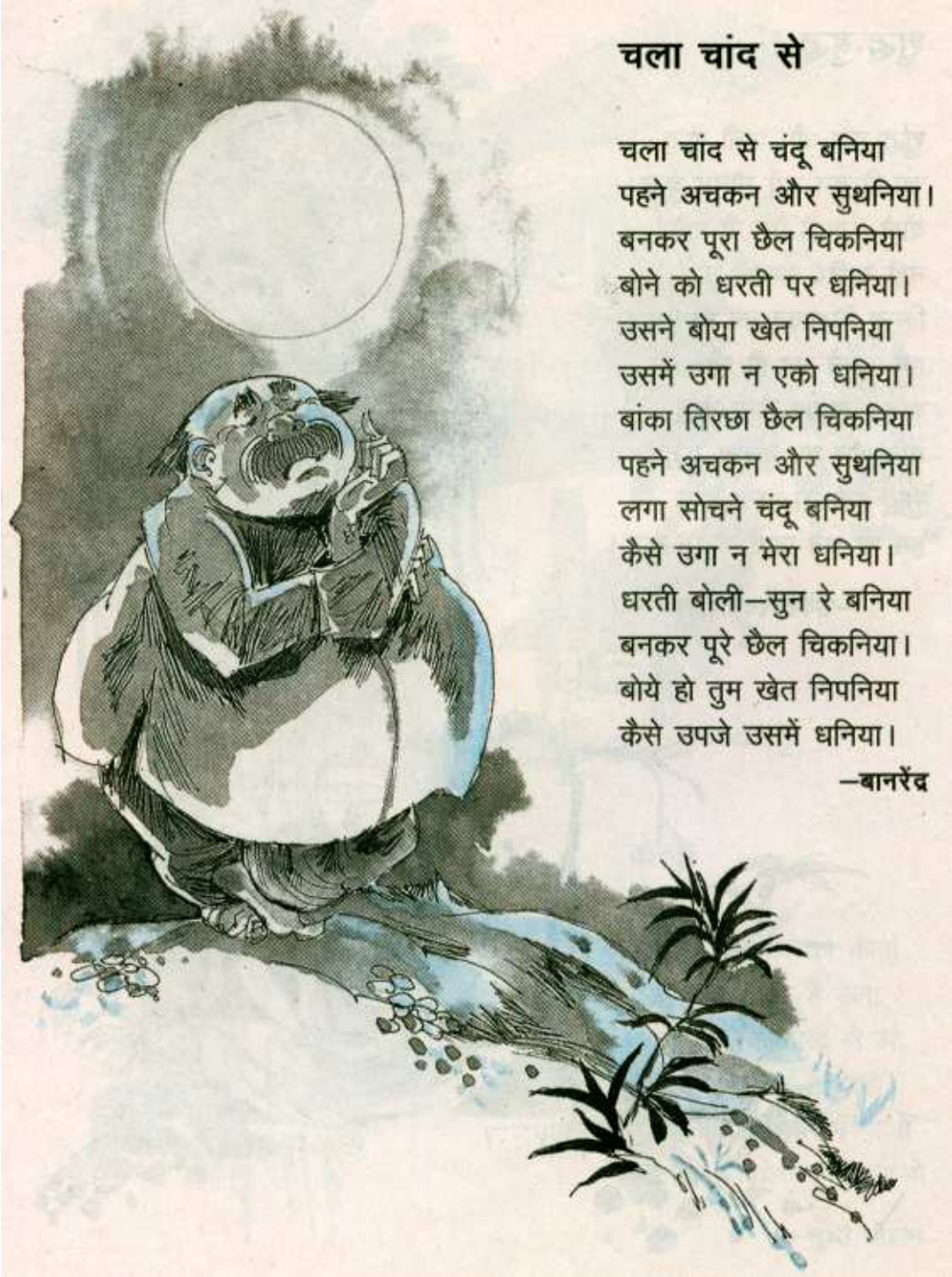
शुद्ध-बुद्ध

शुद्ध हवा औ' पानी शुद्ध
खा-पी बन गये गौतम बुद्ध।
बोले—'सभी प्रेम से रहो
नहीं चाहिये हमको युद्ध !'
किन्तु मिलावट का घी खा
हम सबने यह ही सीखा
बात-बात पर होना क्रुद्ध
बात-बात पर करना युद्ध।
शुद्ध हवा दो पानी शुद्ध
हम भी बन जाएं गौतम बुद्ध।

—सर्वेश्वरदयाल सक्सेना
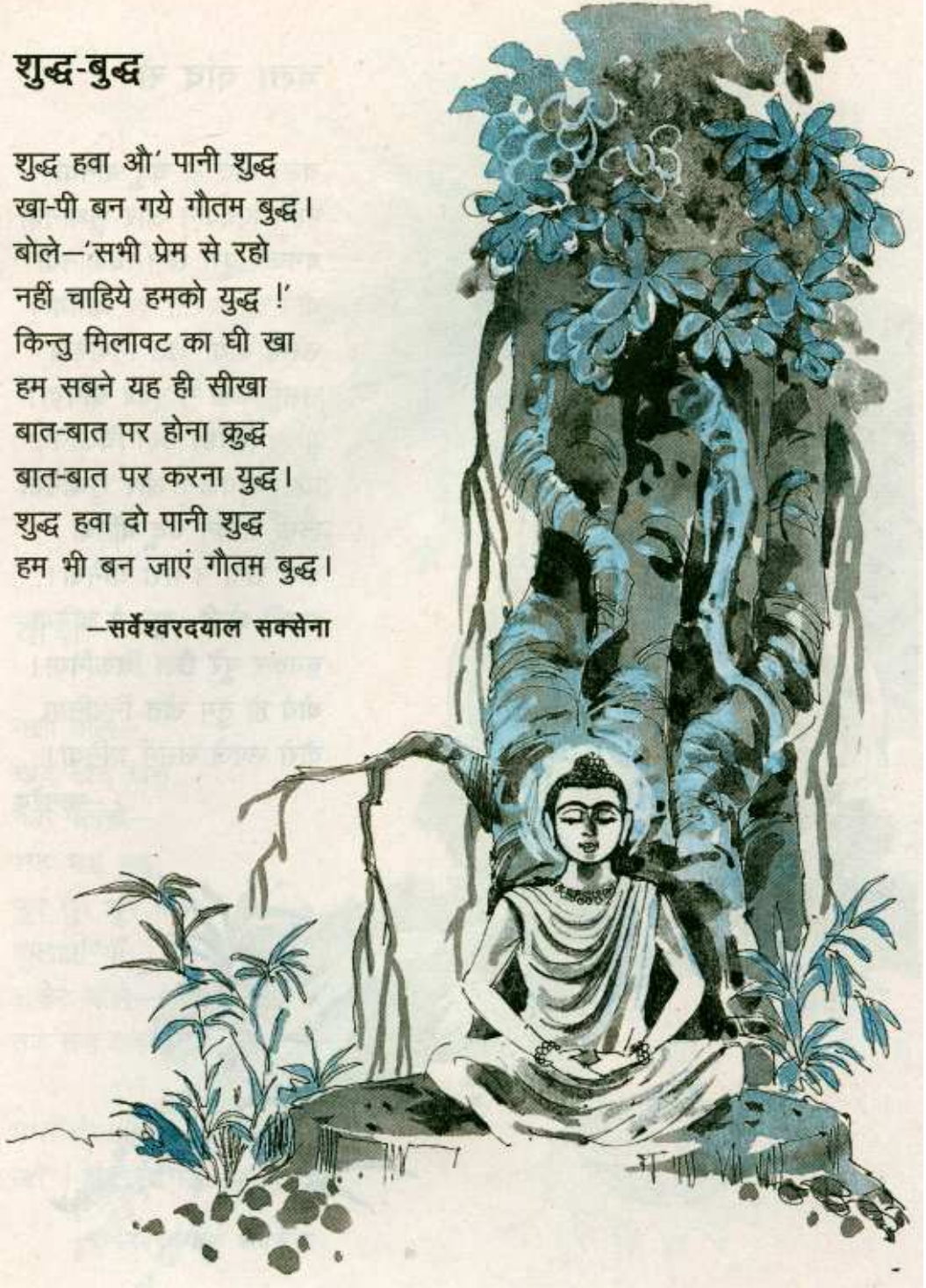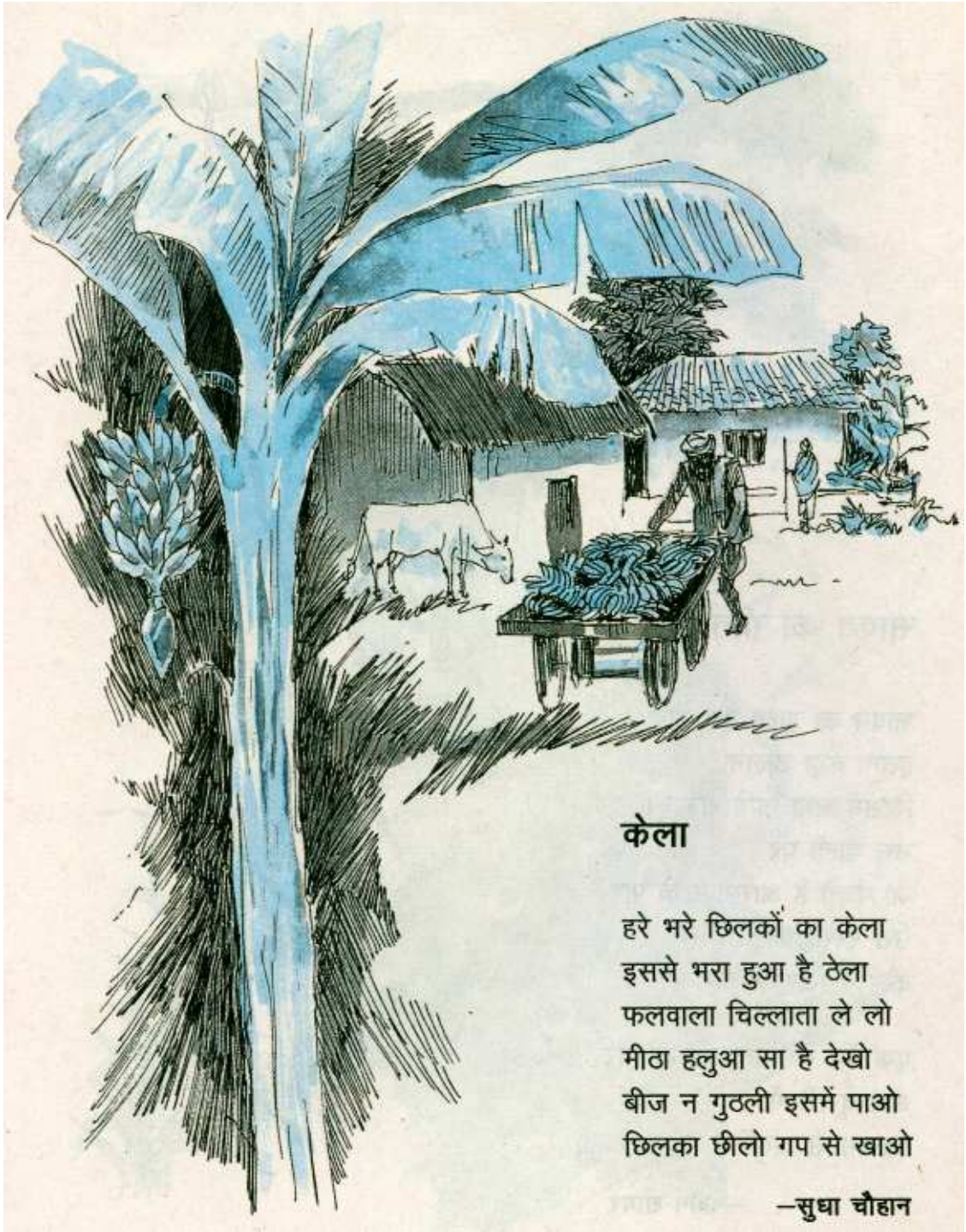
केला

हरे भरे छिलकों का केला
इससे भरा हुआ है ठेला
फलवाला चिल्लाता ले लो
मीठा हलुआ सा है देखो
बीज न गुठली इसमें पाओ
छिलका छीलो गप से खाओ

—सुधा चौहान

सावन का गीत

सावन का झूला इस बार
इतना बड़ा डालना
जिसमें समा जाये संसार।
उस डाली पर
जो फैली है आसमान के पार
उस रस्सी का
कोई न जिसका पारावार।

एक पेंग में मंगल ग्रह के द्वार
और दूसरी में
इकदम से अंतरिक्ष के पार।

—नवीन सागर

बोला मोर

छत पर चढ़कर बोला मोर,
बादल क्यूं करते हो शोर।

छत पर चढ़कर बोला मोर,
नहीं सुहाता कोरा शोर।

छत पर चढ़कर बोला मोर,
बरसो बादल, छोड़ो शोर।

—रमेश थानवी
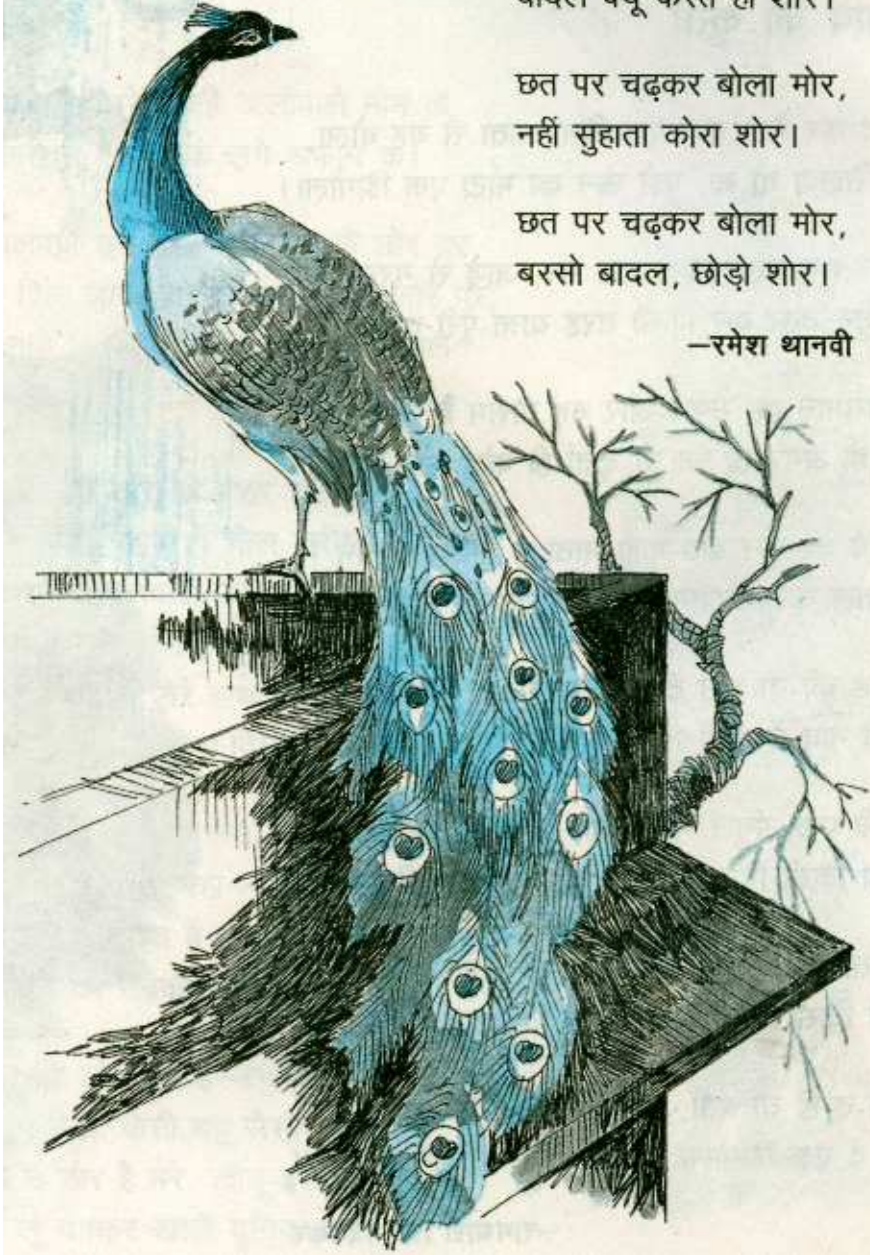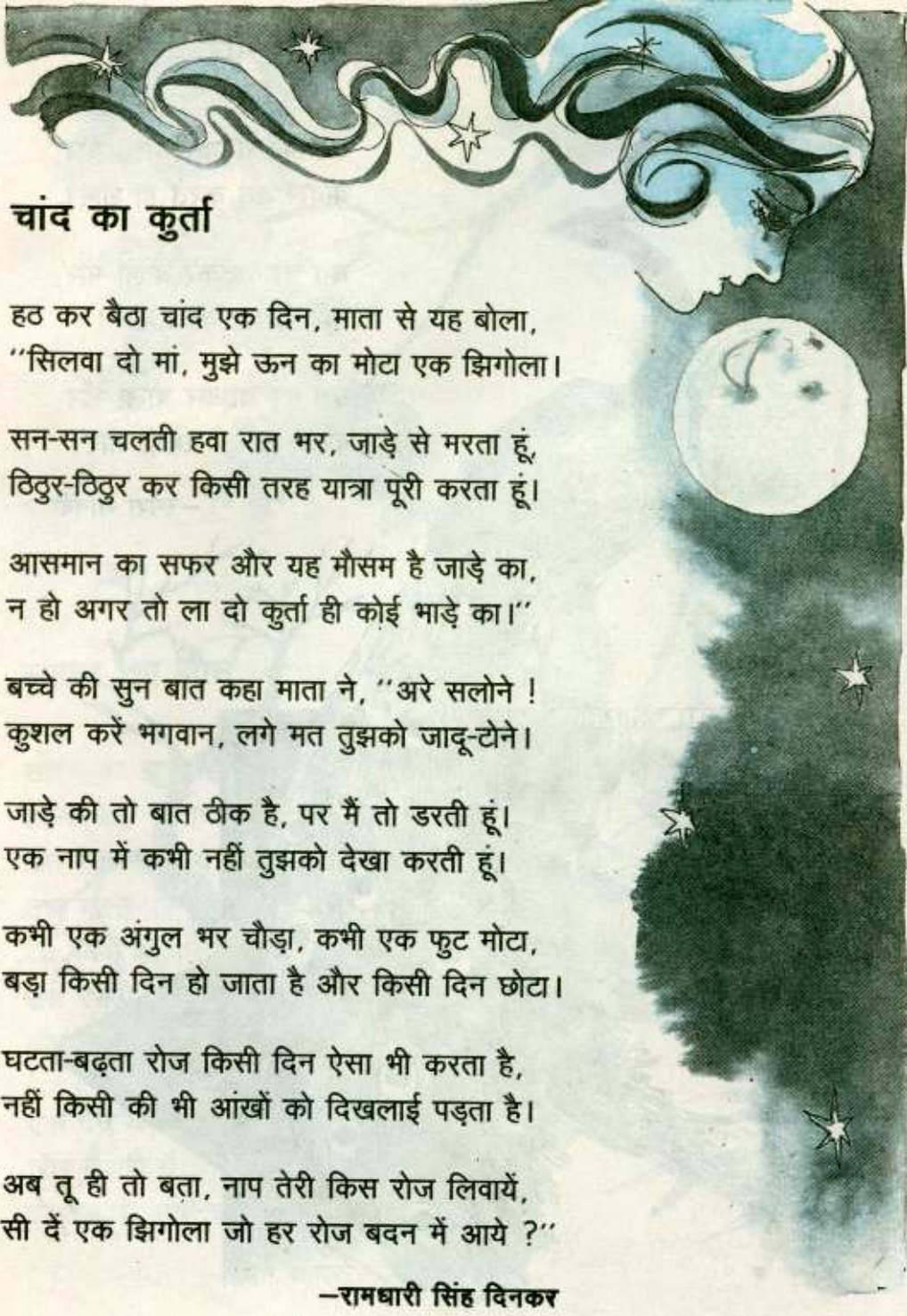
चांद का कुर्ता

हठ कर बैठा चांद एक दिन, माता से यह बोला,
''सिलवा दो मां, मुझे ऊन का मोटा एक झिगोला।

सन-सन चलती हवा रात भर, जाड़े से मरता हूं,
ठिठुर-ठिठुर कर किसी तरह यात्रा पूरी करता हूं।

आसमान का सफर और यह मौसम है जाड़े का,
न हो अगर तो ला दो कुर्ता ही कोई भाड़े का।''

बच्चे की सुन बात कहा माता ने, ''अरे सलोने !
कुशल करें भगवान, लगे मत तुझको जादू-टोने।

जाड़े की तो बात ठीक है, पर मैं तो डरती हूं।
एक नाप में कभी नहीं तुझको देखा करती हूं।

कभी एक अंगुल भर चौड़ा, कभी एक फुट मोटा,
बड़ा किसी दिन हो जाता है और किसी दिन छोटा।

घटता-बढ़ता रोज किसी दिन ऐसा भी करता है,
नहीं किसी की भी आंखों को दिखलाई पड़ता है।

अब तू ही तो बता, नाप तेरी किस रोज लिवायें,
सी दें एक झिगोला जो हर रोज बदन में आये ?''

—रामधारी सिंह दिनकर

काली छत पर… !

काली छत पर पसरे काली डालोंवाले नीम के
नीचे दोपहरी में ऐसे झोंके लगे अफीम के।

एक फिसलपट्टी उग आई आसमान के छोर पर
दो बच्चे, फिर जाने कितने उमड़े उनके शोर पर,
माइक लगाये रिक्शे दो-दो झपटे बड़े उतावले
गोल बांध कर पक्षी दौड़े उनके पीछे बावले।

अरे-अरे, यह तो सारा ही शहर धुएं-सा उठ रहा
अरे-अरे, यह तो पहाड़ ही चील सरीखा उड़ रहा,
छोटू के घर की फुलवारी उड़ी अचानक फुर्र से
बाबू के आंगन की इमली लगी सरकने सुर्र से,
अरे बाप रे ! यह तो मेरे हाथ-पांव ही जा रहे
कैसे इन्हें बुलाऊं मेरे दिल-दिमाग चकरा रहे।

कहां आ गया मैं ?—यह कैसी फैली है अलकापुरी
लो यह मैं तो उड़ा जा रहा—हल्का, जैसे पांखुरी,
यक्षिणियां ही यक्षिणियां हैं छत पर बाल सुखा रहीं
मुझे घेर लेने को सबकी सब बांहें फैला रहीं।

वाह-वाह ! यह तो पतंग है—रंगबिरंगी, नाचती
आसमान में देखो कैसी बहू जैसी भागती,
और हाथ में डोर है मेरे, खींचूं इसको जोर से।
तो समेट लूं चक्कर खाती दुनिया चारों ओर से।

अररर-ररररर गिरा जा रहा हूं मैं, कोई थाम ले।
यह क्या ? मुझे पुकार रहा है कोई मेरा नाम ले,
पानी का पर्दा-सा मेरे आसपास कुछ हिल रहा ?
कुछ उल्लू, कुछ गदहे जैसा चेहरा उसमें खिल रहा।

हां, अब समझा—पंख फड़फड़ाते पेड़ों की झील में
लटका हुआ पड़ा मैं औंधा, कपड़ा जैसे कील में,
पता नहीं, यह किसका चेहरा बार-बार दिखला रहा
मुझको जो मुंह बिरा अचानक फिर-फिर गुम हो जा रहा

इतने में वह झील उड़ गयी, कपड़ा मुझ पर गिर पड़ा
काला कौवा एक अचानक सिर पे मेरे पिल पड़ा,
आंखें खुल गयीं देखा—मेरे घर में, बूढ़े, भीम जी,
कांव-कांव कर पूछ रहे हैं ''कैसी रही अफीमची जी ?'

—रमेशचंद्र शाह